

حرم الغفران ۱۴۲۵ھ

عماد شجاع کل لکھنؤ

قَالَ اللَّهُ تَبَارَكَ وَتَعَالَى قَدْ جَاءَكُمْ مِنَ اللَّهِ نُورٌ وَكِتَابٌ مُبِينٌ
وَكُلُّهُ لَكُمْ لَمْ يَكُنْ لَكُمْ نَارٌ قَبْلُ وَكُنْتُمْ فِي ظُلُمٍ أَدْمِغْتُمْ عَنْهَا



مؤسسہ نور ہدایت حسینیہ غفران مآب لکھنؤ-۳

R.N.I. No. UPBIL/2004/13526 Postal Regd. No. SSP/LW/NP-75/2005-07

SHUA-E-AMAL

Lucknow

शुआ-ए-अमल

हिन्दी, उर्दू मासिक पत्रिका लखनऊ

ابن الطالب بدم

الفتول بکریلاء



NOOR-E-HIDAYAT FOUNDATION

Imambara Ghufraan Maab, Chowk LUCKNOW-3 (U.P.) INDIA, Phone : 2252230

वर्ष-2

R.N.I. No. UPBIL/2004/13526
Postal Regd No-SSP/LW/NP-75/2005-07

अंक 7-8

माह जनवरी-फरवरी - 2006 लखनऊ
नूर-ए-हिदायत फाउण्डेशन की
हिन्दी, उर्दू मासिक पत्रिका

मुहर्रम नम्बर
1427

शुआ-ए-अमल
“लखनऊ”

मुहर्रम नम्बर
1427

संरक्षक
मौलाना सै. कल्बे जवाद नक्वी साहिब
सम्पादक
सै. मुस्तफा हुसैन नक्वी 'असीफ' जायसी
उप-सम्पादक
हैदर अली

कार्यकारिणी बोर्ड
प्रोफेसर सै. हुसैन कमालुद्दीन अकबर, मु0 र0 आबिद,
सैय्यद समीउल हसन वसीम, शबीब अकबर नक्वी

वार्षिक - 200 रु

मिलने का पता

कीमत - 40 रु

नूर-ए-हिदायत फाउण्डेशन
इमामबाड़ा हज़रत गुफ़रानमआब मौलाना कल्बे हुसैन रोड
चौक लखनऊ - 3 (उ.प्र.) भारत फोन न0 0522-2252230

सै. कल्बे जवाद नक्वी प्रिन्टर, पब्लिशर और प्रोपराइटर ने मासिक शुआ-ए-अमल (उर्दू, हिन्दी) निज़ामी आफसेट प्रेस विक्टोरिया स्ट्रीट लखनऊ से छपवाकर आफिस नूर-ए-हिदायत फाउण्डेशन इमामबाड़ा गुफ़रानमआब मौलाना कल्बे हुसैन रोड लखनऊ-3 से प्रकाशित किया। सम्पादक : सै0 मुस्तफा हुसैन नक्वी 'असीफ जायसी'।

फ़ेहरिस्ते मज़ामीन

न०	मज़मून	लेखक	पेज न०
1-	जुलजनाह		
	आयतुल्लाहिलउज़मा सैय्यदुलउलमा सैय्यद अली नक़ी ताबासराह		3
2-	गरज़े शहादत		
	उमदतुल उलमा मौलाना सैय्यद कल्बे हुसैन नक़वी साहब ताबासराह		8
3-	दर्सगाहे कर्बला के चन्द सबक		
	आकाए शरीअत मौलाना सैय्यद कल्बे आबिद नक़वी साहब ताबासराह		12
4-	हुसैन अलैहिस्सलाम और हम		
	अल्लामा नज्म आफन्दी साहब ताबासराह		16
5-	सिजदा उस एक तेग़ तले का		
	फख़रे मिल्लत डाक्टर मौलाना सैय्यद कल्बे सादिक़ साहब किब्ला		19
6-	जवाज़े ताज़ियादारी		
	मौलाना सैय्यद कल्बे जवाद नक़वी साहब किब्ला मददज़िल्लहुश्शरीफ़		24
7-	जनाबे ज़ैनब का जुल्म-तोड़ जवाब		
	मु० र० आबिद		27
8-	ख़ानदाने इज्तेहाद और अज़ादारी		
	सैय्यद मुस्तफ़ा हुसैन नक़वी 'असीफ़' जाएसी		30
9-	मिसाली दोस्त हबीब (अ०) इब्ने मज़ाहिर		
	हैदर अली		34
10-	घर और समाज में खुदा का डर (तक़वा)		
	हुज्जतुल इस्लाम हुसैन अन्सारियान		36
11-	मुख्य समाचार		
	इदारा		38

जुलजनाह

आयतुल्लाहिल उज़मा सैय्यदुल उलमा सैय्यद अली नकी ताबा सराह

जिस तरह आदम (अ0) की औलाद में खुदा ने ऐसे इन्सान पैदा किये जो अपनी क़ाबिले क़द्र खुसूसियतों के सबब से दुनिया में हमेशा-हमेशा के लिए अपना नाम छोड़ जाँ इसी तरह आलमे काएनात में दूसरी किस्म की चीज़ों के अन्दर भी ऐसे-ऐसे नमूने पैदा किये हैं जिनके आला सिफात उस जिन्स के लिए फ़ख़ व नाज़ का सबब बन सकें।

क़दरदानी हर चीज़ की उसके लिहाज़ से होना चाहिए। हर पिछली चीज़ जिससे ऐसे वाक़ेआत का ताल्लुक़ हो जो आइन्दा नसले इन्सानी के लिए सबक़ देने वाले हों वह उसकी हक़दार है कि उसकी याद हमेशा ताज़ा रखी जाए।

क़द्र के क़ाबिल सिफ़त हर शै में क़द्र के क़ाबिल है उसमें किसी मज़हब व मिल्लत का फ़र्क़ नहीं है। एक दरयादिल साहबे ज़ूद व सख़ा इन्सान अपनी खुसूसी सिफ़त के बाअिस हर इन्सान की मुहब्बत का सबब है। एक सच्चाई पर जान देने वाला जिगर वाला शख्स हर इन्सान की अक़ीदत का मरकज़ होता है। एक नेक दिल, खुश अख़लाक़ आदमी की हर एक तारीफ़ करेगा। यह तमाम इन्सानी सिफ़तें हैं जिनकी क़द्र करने वाला हर इन्सान होता है। यह चीज़ें मज़हब व मिल्लत के तफ़रक़े से बिलकुल अलग हैं।

इसी तरह ग़ैर इन्सानी जानदार मख़लूक़ में इम्तियाज़ी सिफ़ात हर शख्स के ध्यान का बाअिस हो सकते हैं। मुहज़ज़ब और मुतमदिदन

जमातें यादगार कायम करती हैं और याद ताज़ा भी रखती हैं। इन जानवरों की भी जो किसी अहम वाक़ेए में कोई नुमाय़ाँ हैसियत रखते हों।

आगरा के शाही क़िले के बाहर सय्याह को घोड़े का मुजस्समा ज़रूर नज़र आएगा। सीने तक ज़मीन के अन्दर और सिर्फ़ सर व गर्दन उसकी बाहर दिखती है। इसको जुस्तजू ज़रूर दरयाप्त करने पर मजबूर करेगी। "यह घोड़ा कैसा है?" इसे मालूम होगा कि यह घोड़ा एक बहादुर शेरदिल इन्सान को क़िले की ऊपरी दीवार से लेकर फाँदा था और सीने तक रेंग में धंस गया था।

इससे इन्सानी हिम्मत पर क्या असर पड़ता है? इन्सान के दिल पर कौन सा नक्श काएम होता है? इन्सान को क्या सबक़ हासिल होता है? बहरहाल ऐसा ही कुछ था जिसे बतौर यादगार मुजस्समे की सूरत में काएम रखने की ज़रूरत महसूस की गयी।

कम से कम खुद इन्सान की पहचान की क़द्र साबित होगी कि वह जानवर की भी क़द्र करता है। अगर उससे कोई नुमाय़ाँ वाक़ेआ सामने आ जाए।

अख़बार पढ़ने वाला तबक़ा बेख़बर न होगा उन वाक़ेआत से जो रोज़ाना दूसरे मुल्कों में होते रहते हैं, जहाँ मालूम होता है कि हैवान भी क़द्र के क़ाबिल हो सकता है और इन्सान की इन्सानियत इस क़द्र को जानने पर मजबूर हो जाती है।

हैवानी नस्ल में ऐसी मख्लूक की कमी नहीं है जो अपनी जिन्स के एतबार से बुलन्द सिफतों की हामिल हो, एक कुत्ता जो हैरतअंगेज वफादारी का इज़हार करता है इस काबिल समझा जाता है कि उसके मरने पर इज़हारे ग़म व अलम के लिए हज़ारों रुपये खर्च कर दिये जाएँ, जलसे हों और इज़हारे रंज किया जाए। जापान के मुल्क का यह वाक़ेआ अभी कुछ ज़्यादा दूर नहीं हुआ है।

मज़हबी रिवायात में अस्हाबे कहफ के कुत्ते का ज़िक्र कुआने मजीद तक में मौजूद है और वह भी उन्हीं खुसूसियतों में शरीक किया गया जो अस्हाबे कहफ के लिए हासिल हैं वह जदीद दुनिया की जदीद तहज़ीब का कारनामा था और यह क़दीम तारीख़ का क़दीम वरक़।

एक मुद्दत तक ईसाइयों की गिरजाओं में उस सुम की ताज़ीम हुई है जो हज़रत ईसा की सवारी के हैवान का उनके यहाँ समझा जाता था।

इस्लाम में उस दुम्बे की यादगार का़एम की गयी जो हज़रत इब्राहीम (अ०) के पास उनके फ़र्ज़न्द इस्माईल (अ०) के फ़िदये की कुर्बानी के लिए आया था और हमेशा-हमेशा के लिए बक़रईद में कुर्बानी का हुक्म देकर उसकी शबीह बनाने का क़ानून जारी कर दिया गया।

मुसलमानों की बड़ी तादाद ने उस ऊँट और महमल की यादगार का़एम की जिस पर उम्मुलमोमिनीन हज़रत आएशा सवार हुई थीं और वह अब तक मिस्र से जो अरबी तहज़ीब व तमद्दुन का गहवारा बना हुआ है वह महमल मक्क-ए-मोअज़्ज़मा भेजी जाती रही है।

हिन्दू कौम तो बराबर जानवरों की क़द्र जानने वाली रही है, वह हर उस जानवर को

जिससे नौए इन्सानी को फाएदे पहुँचें हैं, क़द्र की निगाह से उस हद तक देखती है जिसे इबादत की हद तक समझा जा सकता है।

अगरचे इबादत अल्लाह के अलावा की जाएज़ नहीं है मगर इन्सान को पिछले वाक़ेआत की याद ताज़ा रखने के लिए ज़रूरत है कि वह उन तमाम चीज़ों की याद बाक़ी रखे जिनके साथ उन वाक़ेआत का ताल्लुक़ है।

ईसाईयों ने ग़ैर जानदार चीज़ वह सूली जिस पर हज़रत यसूअ मसीह (अ०) को उनके ख़याल में चढ़ाया गया है आज तक सलीब की शक्ल में का़एम रखी है जो हर गिरजाघर में मौजूद रहती है और हर ईसाई की गर्दन में लटकी रहती है।

इस्लामी रिवायात में हज़रत इब्राहीम (अ०) के खड़े होने की जगह (मक़ामे इब्राहीम अ०) मुसल्ला क़रार दिया गया कि वहाँ लोग नमाज़ पढ़ें, वह पानी का चश्मा जो इस्माईल (अ०) के प्यास से परेशान होने की हालत में सामने आया था चाहे ज़मज़म के नाम से इन्तिहाई बरकत वाला क़रार दिया गया। कोहे सफ़ा और मरवह को जहाँ हज़रत हाजरा पानी की तलाश में परेशान फ़िरीं थीं, दौड़ने की जगह बना दिया गया। इसके माने यह हैं कि अरक़ाने हज में शबीहें का़एम की गयीं, उन पिछले वाक़ेआत की जो अहम हस्तियों से ताल्लुक़ रखते हैं।

वह वाक़ेआत ज़िन्दा रखने के काबिल हैं जो नस्ले इन्सानी के लिए अच्छे-अच्छे सबक़ देते हों, जो दिल में रहम व करम का शौक़ पैदा करते हों, जो वफादारी और नेक शेआरी की क़द्र बतलाते हों।

यह वाक़ेआत वह होते हैं जो अगरचे

किसी खास कौम या जमात ही में वाक़े हुए हों लेकिन उनका फाएदा और नतीजा तमाम नस्ले इन्सानी के साथ एक ही हैसियत से ताल्लुक रखता है। इसलिए इनमें हरगिज़ कोई तफरीक नहीं होनी चाहिए। वह हरगिज़ फिरका वाराना हैसियत नहीं रखते और न फिरकाबन्दी का बाअिस होते हैं। अगर उन्हें फिरका बन्दी के तौर पर अदा किया जाए तो यह किसी खास जमात की गुलती होगी जिससे खुद वाक़े के फाएदे की हैसियत और हमागीरी को नुक़सान पहुँचेगा इसलिए खुद वाक़ेआ उस तर्ज़अमल का शक करने वाला होगा।

क़र्बला का अहम वाक़ेआ जो 61 हिजरी में दसवीं मोहर्रम को पेश आया वह अगरचे मज़हबी रिवायात के एतबार से एक खास जमात यानी मुसलमानों के साथ ताल्लुक रखता है लेकिन हकीकत में वह अपने नतीजे के एतबार से तमाम दुनिया की तारीख़ का एक अहम सबक़ लेने वाला सहीफा है। वहाँ तमाम इन्सानी सिफ़तें व फ़ज़ीलतें अमली तौर पर पेश की गयीं थीं, वहाँ रहमो करम, अख़लाक़ व मुरव्वत, सिबाते क़दम और इस्तेक़लाल, तहम्मुल व ज़ब्तो नफ़्स, ईसार व हमदर्दी, हक़ परवरी और हकीकत कोशी, यह सब और इनके अलावा तमाम इन्सानी मुकम्मल सिफ़ात थे जो मुजस्सम तौर पर सामने लाए गये।

इसलिए हरगिज़ क़र्बला के वाक़े की यादगार कायम करने और उस वाक़े से सही सबक़ हासिल करने के तन्हा मुसलमान हक़दार नहीं हैं बल्कि पूरी इन्सानियत इस वाक़े के अहम नुकात और तालीमात से बहरामन्द होने का मौक़ा रखती है।

हुसैन (अ0) की ज़ात दुनिया के लिए नुक़त-ए-इत्तेहाद है। हुसैन (अ0) की ज़ात ही

आलम के लिए मरकज़े इज्तेमाअ है। हुसैन (अ0) की ज़ात तमाम दुनियाए इन्सानियत के लिए पैग़ामे हयात है। हुसैन (अ0) की ज़ात तमाम नसले बशरी के लिए सामाने नजात है।

दुनिया हज़ारों मसलों में इख़्तेलाफ़ रखे, आपस में दस्तो गिरेबाँ हो मगर जब शहीदे क़र्बला हुसैन (अ0) की हस्ती सामने आएगी तो यहाँ आकर तमाम फ़र्क़ दूर हो जाएँगे, यहाँ किसी इख़्तिलाफ़ की गुन्जाइश न होगी। किसी मज़हब का मानने वाला हो, किसी मिल्लत का पैरो हो मज़हब से काम नहीं बिलकुल ला मज़हब इन्सान हो, तबअी हो, नेचरी हो, दहरी हो जो भी हो लेकिन अगर सीने में दिल और दिल में एहसास रखता है तो वाक़े-ए-क़र्बला से मुतास्सिर हुए बग़ैर नहीं रह सकता है।

मैं सच कहता हूँ कि हुसैन (अ0) की ज़ात तमाम इख़्तिलाफ़ात से ऊपर है। शीओं को यह हक़ नहीं है कि वह यह कहें कि हुसैन (अ0) सिर्फ़ हमारे हैं। मुसलमानों को यह हक़ नहीं कि वह यह कहें कि हुसैन (अ0) सिर्फ़ हमारे हैं। हकीकत में हुसैन (अ0) तमाम इन्सानी दुनिया के हैं। उन्होंने वह काम किया है जिसने मिटती हुई इन्सानियत के निशानों को उभार दिया। जिसने दम तोड़ती हुई इन्सानियत को नए सिरे से ज़िन्दा कर दिया, जिसने इन्सानियत की डूबती हुई कश्ती को साहिले मुराद तक पहुँचा दिया। उन्होंने अपनी जान देकर हमेशा-हमेशा के लिए वह नमूना काएम कर दिया जिसकी पैरवी हमेशा के लिए मेयारे इन्सानियत रहेगी।

यकीनन ऐसे अहम वाक़ेआत की यादगार काएम करना हर उस सूरत से जो उस वाक़े की याद बाक़ी रखने में फाएदे वाली साबित हो सके

एक अहम इन्सानी फ़र्ज है।

कर्बला में जिस तरह हुसैन इब्ने अली (अ0) के साथी इन्सानों ने वह कारे नुमायाँ किए जिनकी मिसाल सफह-ए-तारीख़ पर नहीं मिल सकती। इसी तरह दूसरे जीरुह यानी जानवर को भी यह फ़ख़ है कि उसने एख़लास व वफ़ा का ऐसा नमूना पेश किया जो तारीख़ में यादगार रहेगा।

वह हुसैन का घोड़ा जो "जुलजनाह" के नाम से मौसूम था उसने अपने मालिक का साथ उस आख़री वक़्त तक दिया जबकि कोई मुआन व मददगार, कोई ख़बर लेने वाला और ख़बर पहुँचाने वाला बाकी न था किसे नहीं मालूम कि कर्बला में फ़र्जन्दे रसूल (स0) के लिए पानी का क़हत हो गया था। भला कौन कह सकता है कि छोटे बच्चों के लिए जिसमें अली असग़र का सा दूध पीता बच्चा भी हो, लब तर करने के लिए पानी न मौजूद हो तो घोड़े पानी से सैराब किये जा सकते होंगे?

हरगिज़ नहीं, अगर बच्चों के लिए सबसे आख़री क़तरा पीने के लिए पानी का सर्फ़ हो सकता है तो घोड़े उसके पहले से प्यासे होंगे इसके बाद सुब्ह से सेपहर के वक़्त तक बराबर सैय्यदुश्शोहदा को अरब की तेज़ धूप, गर्म हवा में ख़ेमागाह से मैदाने जंग तक (जो काफी दूर था) आना और जाना, हर अज़ीज़ की रुख़सत के वक़्त ख़ेमे के पास होना और जाँकनी के वक़्त मैदाने जंग में उसके सरहाने। यह तमाम आमद व रफ़्त घोड़े की पुश्त पर होती थी, फिर हमले, लड़ाई और वह क़यामतख़ेज़ लड़ाई जिसकी मिसाल तारीख़ में नहीं है।

सबसे पहले आगाज़े जंग तीरों की बारिश

ही से हुआ था, इसके बाद ज़ोहर से घण्टा ढेढ़ घण्टा पहले जब तमाम यज़ीदी फौज ने एकसाथ तीरों की बारिश की है और हज़ारों तीरों की बाढ़ें एक साथ चली हैं तो तारीख़ गवाह है कि उसकी सबसे बड़ी ज़द घोड़ों ही पर हुई थी चुनानचे फौजे हुसैनी के ज़्यादा घोड़े उसमें पै हो गये और अक्सर सवार पैदल हो गये। कौन कह सकता है कि उस वक़्त जुलजनाह को कोई ज़ख़्म नहीं आया। वह वक़्त जबकि हज़ारों की फौज के सैलाब में एक तन्हा हुसैन (अ0) डूबते थे और दुश्मनों को मुन्तशिर करके बाहर आते थे, नेज़ों के हमले भी थे और तलवारें भी, तीर भी थे और तबर भी उस वक़्त क्या घोड़ा हुसैन (अ0) का महफूज़ था? और क्या दुश्मनों के घबराए हुए हरबे जो बेताबी के आलम में पड़ते थे वह मरकब को साफ बचा ले जाते थे?

जंग का वाकिफ़कार यकीन के साथ कह सकता है कि इस अज़ीमुश्शान जंग में एक घोड़ा हुसैन (अ0) का एक बहादुर जाँनिसार और एक वफ़ाशिआर मुआन व मददगार का काम अन्जाम दे रहा था वह यकीनन दुश्मनों को ज़द पर लाता था, वार ख़ाली करता था और गिरे हुए दुश्मन को रौंदता भी था और शिकस्ता भी करता था।

इस गेरुदार, इस जंग जिदाल, इस हंगाम-ए-क़िताल में घोड़े की प्यास, उसके सीने का इल्तेहाब, उसके जिगर की सोज़िश, उसके एहसास से ताल्लुक़ रखती है मगर वह वक़्त यादगार है कि जब फौज से मैदान साफ हुआ, फुरात का दामन बिलकुल ख़ाली हो गया, हुसैन (अ0) नहर के करीब आए, घोड़ा अपना नहर में डाल दिया और यह कहा या अपने तर्ज़े अमल से साबित किया कि "ऐ मेरे बावफ़ा! तू बहुत प्यासा होगा यह पानी मौजूद है अपनी प्यास बुझा ले।"

उस वक़्त कोई नहीं, फुरात की मौजें गवाही देंगी, साहिले फुरात शहादत देगा कि घोड़े ने अपनी गर्दन उठा ली थी, अपना सर बुलन्द कर लिया था, अपना मुँह बन्द कर लिया था। मतलब यह था कि मैं हरगिज़ पानी नहीं पियूँगा, जब तक आप इस पानी से सैराब न होंगे। हुसैन नहर से बाहर निकल आए और घोड़ा भी प्यासा निकला।

अब वह वक़्त आया जब घोड़े की तमाम कोशिशें जंग ख़त्म हो चुकी, जब उसकी पुश्त उसके राकिब से ख़ाली हो गयी। जब उसके मालिक को चारों तरफ से खूँआशाम दुश्मनों ने घेर लिया, उस वक़्त उसके लिए हुसैन (अ0) की सबसे बड़ी ख़िदमत का वक़्त आया, उस वक़्त उसने वह काम अन्जाम दिया जो उसके लिए मख़सूस हो गया।

उसने एहसास किया कि अब मुदाफ़ेअत का कोई मौक़ा बाकी नहीं है, जंग का मैदान दुश्मनों से भरा है और यहाँ कोई दोस्त नहीं है, वह अभी जॉनिसारी व जॉफ़रोशी कर रहा था, जिहाद के रास्ते में हुसैन (अ0) का साथ दे रहा था, लेकिन अब जबकि उसका सवार अपनी मन्ज़िल तक पहुँच गया, जबकि रास्ते की मुसाफ़त ख़त्म हो चुकी, जबकि सवारी को कोई सवाल बाकी नहीं है तो उसने खुद अपने उस फर्ज़ का एहसास किया कि

वह बेकस व बेबस औरतों को जो खेमों में अपने वाली व वारिस की ख़बर की मुन्तज़िर थीं जाकर अपने मालिक की ख़बर पहुँचा दे।

उसने अपनी पेशानी खून में तर की, वह सीधा खेम-ए-हुसैन (अ0) के दरवाज़े पर पहुँचा, उसने हिनहिना कर अपनी आवाज़ अन्दर पहुँचाई। मुन्तज़िर सैय्यदानियाँ उसकी आवाज़ को सुनते ही दरवाज़े पर आ गयीं वह देखा जो पहले कभी न देखा था, उसका ख़ाली जेन, उसकी रंगीन पेशानी, उसकी कटी हुई बागें, उसका ज़ख्मी जिस्म, उसके जिस्म में पेवस्त तीर वह सब कुछ कह रहे थे जिसकी ख़बर देने वह दरवाज़े पर आया था।

यह थी वह आख़री ख़िदमत जो जुलजनाह ने अन्जाम दी, और यह है वह यादगार वाक़ेआ जो इस यादगार जानवर के साथ ताल्लुक रखता है। यही वह यादगार है जो हुसैन इब्ने अली (अ0) की अज़ादारी के सिलसिले में "जुलजनाह" की शबीह निकाल कर काएम की जाती है।

"जुलजनाह" ज़िन्दा है जब तक हुसैन (अ0) का नाम ज़िन्दा है। अपने सवार की बदौलत भी हमेशा ज़िन्दा रहेगा और उसकी यादगार हमेशा काएम रहेगी।

□□□

अक़वाले सैय्यदुश्शोहदा अलैहिस्सलाम

- ☐ किसी इमारत में हराम चीज़ों का इस्तेमाल न करो कि वह वीरानी का बाअिस है।
- ☐ जो तुम्हारा दोस्त होगा वह तुम्हें बुरे कामों से बचाएगा।
- ☐ इंसान की इज़ज़त इसमें है कि वह दूसरों का मोहताज न रहे।

गरजे शहादत

उमदतुल उलमा मौलाना सैय्यद कल्बे हुसैन नकवी साहब ताब सराह

जब हिजरी सन् बदलता है, जब माहे जिलहिज्जह की आखरी तारीख में खंजरे ग़म बनकर नया चाँद मोहरर्म की पहली रात में आसमान पर चमकता है, जब हर सच्चे शीआ के घर में मातम की सफ बिछती है, ग़म का लिबास जिस्म पर होता है, हर मर्द औरत पूरी तरह से ग़म की निशानी बन कर अहलेबैते रसूल (स0) की मुहब्बत का मुज़ाहेरा करता है। जन्नत के फिदायी असहाबे हुसैन की तरह मज़लूम पर जान फिदा करने की तमन्ना में बेचैन होने वाले कहीं अलमदारे लश्करे हुसैन की यादगार में अलम नसब करते हैं कहीं जियातरते क़ब्रे हुसैन के मुश्ताक़, बाँस, काग़ज़, लकड़ी या चाँदी सोने से शबीहे रौज़ा शहीदे कर्बला बना के असल से दूर रह कर भी शबीह को देख कर सवाबे ज़ियारत हासिल करते हैं।

ज़िक्रे हुसैन को हर उस अन्दाज़ में दुनिया के सामने पेश करने की कोशिश करते हैं जो दिलनशीन और नज़रों में समाने वाला हो। दुनिया के हर उस इंसान के लिए जज़्बात को भड़काने वाला हो, जिसके दिल के किसी गोशे में मज़लूम से हमदर्दी की लहरें छुपी हों।

इनही फिक्रों का इज़हार कहीं रौज़ाख़्वानी कहीं किताब ख़्वानी, कहीं वाक़ेआ ख़्वानी और कहीं नस्र ख़्वानी, मरसिया और ग़म की सूरत में ज़ाहिर होता है और अब आख़िर में नसीहत के नाम से बुलन्दी की आख़री मन्ज़िल तक पहुँचता है। मज़क़ूर बाला बहुत से अन्दाज़ वह हैं जो अब

छूटे हुए हैं और शायद सैकड़ों आदमियों को मालूम भी न होगा कि मज्लिसे ग़म में उनके पेश करने का तरीका क्या था अपनी मालूमात की हद तक मैं यह कहने की ज़ुराअत कर सकता हूँ कि नसीहत का अन्दाज़ आम होने से पहले हर ज़ाकरी का अन्दाज़ सिर्फ़ फ़ज़ाएल व मसाएबे मासूमीन (अ0) तक मुनहसिर था जिसमें मुनाज़रा की नमकीनी सुनने का शौक़ बढ़ाने के लिए लाज़मी समझी जाती थी।

मगर तक़रीबन एक सदी के अन्दर-अन्दर जब से नसीहत धीरे-धीरे ज़ाकरी के मुख़्तलिफ़ तरज़े नज़र करने लगा, उस वक़्त से मुख़्तलिफ़ मौजू हाज़रीने मजलिस की समाअत तक पहुँचने लगे। (मगर कमी के साथ) ज़ियादती ऐसे ही मज़ामीन, लफ़्ज़ी रिआयात, ख़िताबात, शाएराना नुकात की थी और है। जो सलवात के लरज़ते नारों से वाइज़ के कलाम को आम पसन्द होने की सनद दे दें। वाह-वाह के लालच में सुनने वालों को यह भी समझा दिया जाता है कि सिर्फ़ मुहब्बते आले मोहम्मद (स0) नजात के लिए काफी है। यह भी कह दिया जाता है कि ग़म का एक आँसू तमाम जहन्नम की आग को बुझा देगा।

एक मातम की मज्लिस में बैठ जाना जन्नत का मुस्तहक़ बना देगा मगर यह नहीं बताया जाता कि "बिशरतिहा व शुरुतिहा" यह चीज़ें सिर्फ़ उसी वक़्त जन्नत का परवाना बनती हैं जब इनके साथ ईमान हो, वहदत हो, रिसालत, इमामत, मआद, खुदा की अदालत और तमाम

उसूले दीन के सच्चे दिल से इकरार के साथ। फुरुए दीन, नमाज़, रोज़ा, हज व ज़कात, खुम्स और हराम व हलाल के अहकाम पर भी अमल हो। नमाज़ के वास्ते सुन्नी व शीआ का इत्तेफाक है कि अगर यह इबादत कबूल न होगी तो हर अच्छा काम रद्द हो जायेगा। रोज़े के वास्ते यह अहमियत है कि मोमिन हो, बड़े से बड़ा अज़ादारे हुसैन (अ0) हो, लेकिन माहे रमज़ान में तीस दिन बिना किसी शरअी उज़र शरअी हाकिम की तम्बीह के बाद भी रोज़ा न रखे तो अगर हुकूमते शरअी पर सरकार हो तो उस मोमिन को क़त्ल कर दो। हज जिस पर वाजिब हो और वह इमकान के बाद भी हज न करे तो वह आख़िर वक़्त यहूदी काफ़िर होकर मरेगा। ज़कात मोमिन का हक़ है जो ज़कात अदा न करे उसको खुदा हरगिज़ माफ़ न करेगा, जब तक वह मोमिन माफ़ न करें जिनका हक़ उसने अदा नहीं किया।

खुम्स सादात और इमाम (अ0) का हक़ है और यकीनन वाजिब होने के बाद अपने ही माल में हेर-फेर करने वाले भी ग़ासिबे हक्के सादात और ग़ासिबे हक्के इमाम हैं। जिसके माफ़ करने से अइम्मा ने इनकार फरमा दिया है। जो चीज़ें शरअ ने हराम की हैं उनमें कुछ ऐसी भी हैं जिनके लिए कुर्आन ने खुली दलील दी है कि अगर कोई उनका इरतेकाब करे तो चाहे वह मोमिन हो, चाहे वह मुस्लिम है, अहलेबैत का दोस्त हो या अज़ादारे हुसैन (अ0) मगर उसका बदला जहन्नम के सिवा कुछ और नहीं हो सकता। जैसे क़त्ले मोमिन, पाकदामन के साथ ज़िना करने की सज़ा यह है कि संगसार करके मार डाला जाए।

“और इन्हीं सब चीज़ों की तालीम गर्जे

शहादते हुसैन (अ0) थी।”

अगर हमारे सैय्यद व सरदार (अ0) की शहादत सिर्फ़ इस गर्ज से होती कि रोने वाला कोई भी हो सीधा जन्नत में जाए। मजलिसे हुसैन में बैठने वाला किसी मज़हब का पाबन्द हो मगर वह नजात का मुस्तहक़ है। अहलेबैत (अ0) का दोस्त चाहे जैसा भी बदकार और इबादात को छोड़ने वाला हो मगर वह नजात पाने वाला है, तो यह कहना बिल्कुल ग़लत है कि इमामे हुसैन (अ0) ने अपने नाना का दीन बचाने के लिए कर्बला की अक्ल को हैरान करने वाली फिदाकारी दुनिया के सामने पेश की। नाना ने वहदत, रिसालत, मआद, सिफाते इलाही, नमाज़, रोज़ा, हज वगैरा हर चीज़ की तालीम दी और बगैर इस इल्म व अमल के जन्नत भी मिल जाना मुश्किल बता दिया मगर इमाम हुसैन (अ0) ने मआज़ल्लाह नसरानियों के अक्कीदे की तरह उम्मत के गुनाहों का फिदया बनकर उम्मत को आम इजाज़त दे दी कि कोई अमले ख़ैर न करना, किसी बुराई से न बचना, बस सिर्फ़ मेरी अज़ादारी करना और जन्नत तुम्हारी है।

नहीं खुदा की क़सम हरगिज़ इमामे हुसैन (अ0) की यह तालीम नहीं थी। उनकी शहादत की गर्ज सिर्फ़ हिफाज़ते इस्लाम थी, तालीमाते रसूल (स0) को बाकी रखना था, लोगों को गुमराही से बचाकर उसूल व फुरु के सही रास्तों पर लगाना गर्जे हकीकी थी।

एक ज़माने में इस हिन्दुस्तान में जो कभी जन्नत निशान कहा जाता था, और अब जहन्नम की तस्वीर है। जहाँ इक्तेसादी तकलीफों, लूट-मार, आम लोगों की बदअख़्लाकियों, क़ानून की ख़िलाफवर्जी, हुक्काम की नाइंसाफियों, हुकूमत

की गुफ़लतों और बदइन्तिज़ामियों की कड़वाहट, महंगायी की शिद्दत, डकैती, क़त्ल व ग़ारतगरी, इन्सानि ख़ून की बेक़द्री और फिर फिरका परस्त जमातों की तबलीगी कोशिशों ने हर इंसान की ज़िन्दगी मौत से बदतर बना दी है। अगर हम अपने मज़हब को बचा सकते हैं तो सिर्फ़ अज़ादारी की बदौलत मगर न इस सूरत से कि नौहे को नौहे की हद से निकाल कर मदह की नज़्म बना दें, और उस पर मातम करें मिसरा यह हो कि अली (अ0) ने ख़ैबर फतह कर लिया और हम उस पर मातम कर रहे हैं। न इस सूरत से हम सिर्फ़ चाँद के दो टुकड़े होने और सूरज के वापस लौट आने में बारीकियाँ देखें न इस सूरत से कि सोज़ख़ानी में बड़े-बड़े गवय्यों को मात कर दें। न इस सूरत से कि मिम्बर को तबरी बाज़ी से भरकर खुद अपने ही अफ़राद को मज्लिस से उठ जाने पर मजबूर कर दें बल्कि अगर इस दौर में इस्लाम को बचा सकते हैं तो सिर्फ़ यह बताकर कि हुसैन (अ0) वहदत के कितने ज़बरदस्त मोतकिद थे, शहादत की मन्ज़िलों की वह अज़ीमुशशान सख़्तियाँ जिनको दुनिया का कोई इंसान बर्दाश्त न कर सका सिर्फ़ इस जज़्बे में तय कर गये कि मेरे ख़ालिफ़ का यही हुक्म है, हर वह मुसीबत जो इंसान के तहम्मूल से बाहर थी बड़ी हंसी खुशी से सिर्फ़ इसलिए उठा ली कि मेरा अल्लाह इसमें राज़ी है रसूल की सदाक़त का सुबूत इमामे हुसैन (अ0) ने हर उस इबादत को कर्बला में अदा करके दिया जिनकी तालीम ख़ातमुन्नबिय्यीन (स0) ने दी थी। और जिसको इस मज़लूम और दूसरे मासूमीन (अ0) के अलावा कोई कर्बला के हालात में अदा न कर सका, यानी वाजिबात तो वाजिबात मुसतहब्बात भी तर्क न

किये जिनका तज़किरा इशारों किनायों में कर देने से कुछ हज़रात ग़ाली शीओं की नज़रों में काबिले लान-तान हो गये। मज़हबी मामलों में यक़जहती, इत्तेहाद, खुलूस, नीयत, सब्र, जन्नत व नार, हिसाब व किताब, सवाब व सज़ा, हर चीज़ में यकीन व ईमान की वह मन्ज़िल इमामे हुसैन (अ0) व अस्हाबे हुसैन (अ0) ने पेश की जिससे ज़्यादा मुस्तहक़म ईमान किसी आम इंसान में होना नामुमकिन है।

आज हिन्दुस्तान में यकीनन हमारी जान व माल इतने ख़तरे में नहीं है जितना ईमान ख़तरे में है। इस वजह से कि हुकूमत का मसलक लादीनी है तो रिआया में भी ला मज़हबियत का असर आना ज़रूरी है और इस वजह से कि हुकूमत का मसलक ला दीनी सही मगर कभी-कभी अरकाने हुकूमत किसी न किसी मज़हब के जज़्बात से यकीनन मुतास्सिर हैं। जिनका इज़हार कभी न कभी और किसी न किसी अन्दाज़ में हो जाना नागुज़ीर है और इसलिए कि एक तरफ़ बहाई मिशन दूसरी तरफ़ शुद्धी के फिदायी मज़हब बदलवा देने पर तैयार हैं। और उसमें ज़रा सा भी झूठ नहीं कि गुड़गाँव के इलाके में बंगाल के दूर-दराज़ देहात में सूबे मुम्बई वगैरा के गाँवों में बहुत से मुसलमान अपना दीन बदल चुके हैं। और इसलिए कि नाम के मुसलमान और सिर्फ़ ख़ानदानी शीआ यूँ औरतों की तालीम के फिदाई बन गये हैं कि उनको न ज़िनाकारी आम हो जाने की शर्म है, न बेपर्दगी की ग़ैरत है। न इग़्वा के आम वाक़ेआत देखकर आँख खुलती है, न औरतों के दूसरे मज़हबों के साथ सिविल मैरेज कर लेने से कान पर जूँ रेंगती है, बिलकुल सच है..... "अलहया मअल ईमान" (अगर ईमान हो तो शर्म

व हया भी होती है) अगर ईमान नहीं तो शर्म व हया का खुदा हाफिज़, इस काएदे के मुताबिक यह कहना नागुज़ीर है कि जो बेहयाई बर्दाश्त करने पर खुशी-खुशी तैयार हैं उनका ईमान यकीनन कमज़ोर है। आप याद रखें कि बच्चों की शुरुआती और घरेलू तरबियत व तालीम बहुत ज़ाएद हमारी औरतों की एहसानमन्द है। और इस वजह से यह कौल मशहूर है कि ईमानदारी का ज़्यादा बाकी रहना औरतों ही के दम से है, इसलिए अगर औरतें ही दुनियावी तालीम हासिल करके दूसरे मज़ाहिब से सिविल मैरेज करके ईमान व इस्लाम से बाहर हो जाएँगी। तो बड़ी हद तक ईमान और उसके साथ अज़ादारी भी ख़त्म हो जाएगी, इसलिए इस ज़माने में अज़ादारी-ए-इमामे हुसैन (अ0) में वह अन्दाज़ इस्तिथार किये जाना लाज़िम हैं जिनसे ग़ैर मज़ाहिब मुतास्सिर हों या न हों लेकिन कम से कम हमारे मज़हब में तालीमाते हुसैनी पर अमल करने और उनके नक़शे क़दम पर चलने का शौक पैदा हो। हमारी औरतों में अहलेबैते हुसैन (अ0) की तरह ईमान, इबादत और इताअते ख़ालिक का शौक पैदा हो।

हमारी औरतों और मर्दों को समझना चाहिए कि अगर हम पर फाका गुज़र जाए, अगर हम फ़क़्र की हालत में हों, अगर हम को कहीं मुलाज़मत न मिले, अगर दुनिया हमको ज़लील निगाहों से देखे जो कुछ भी हम पर मुसीबत आए तो हर मुसीबत के बाद भी हमारी तकलीफें असराए अहलेबैते (अ0) की तकलीफों से ज़ाएद कभी बराबर नहीं हो सकतीं। तो क्या इन मुसीबतों पर अल्लाह की पनाह बनी हाशिम की औरतों ने

अपना दीन छोड़ दिया? क्या इबादाते इलाही से ग़ाफिल हो गयीं, क्या अपनी बेपर्दगी को सर झुका कर मन्ज़ूर कर लिया

जनाबे सकीना जिनका सिन तीन या सात साल का था। जो उन औरतों की हद में न थीं। मगर दरबारे यज़ीद में रो रहीं थीं। यज़ीद के सवाल पर आपने जवाब दिया कि वह औरत क्यों न रोए जिसके मुँह को ढाँकने को ज़रा सा कपड़ा भी मयस्सर न हो कि ना महरमों से मुँह छिपा सकें। सबक लें शाहज़ादी के इन अलफाज़ से वह जो कहते हैं कि शरीअत में मुँह का पर्दा लाज़िम ही नहीं है। अगर ऐसा होता तो हमारी शहज़ादी मुँह खुला होने की शिकायत न करतीं और यज़ीद भी जवाब दे सकता था कि मुँह खुला है तो ग़म क्यों है शरीअत में तो मुँह का पर्दा लाज़िम ही नहीं है।

तो क्या जनाबे सकीना के उन बहते हुए आँसुओं के बाद वह औरतें अहलेबैते (अ0) रसूल (स0) की सच्ची चाहने वाली कही जा सकती हैं जो बेपर्दा घूमें, सिनेमा जाएँ, होटलों में ग़ैरों के साथ गुलछरें उड़ाएँ, और आखिर इग़्वा और सिविल मैरेज के अज़ाब में फंसें, और क्या वह मर्द सच्चे हुसैन के शीआ हो सकते हैं जो उन तमाम बेहयाइयों को खुशी के साथ बर्दाश्त करें, न खुदा को पहचानें, न रसूल (स0) को मानें, न नमाज़ पढ़ें न रोज़ा रखें, न अज़ाब व सवाब की फ़िक्र करें। और क्या वह दौलतमन्द सच्चे मोमिन कहे जा सकते हैं जो दीन की बुनियादों के हर हिस्से से आज़ाद हों न हज़ करे, न खुम्स दें, न ज़कात अदा करें और फिर अहलेबैते (अ0) के दोस्तदार होने का दावा करें। □□□

दर्सगाहे कर्बला के चन्द सबक

आकाए शरीअत मौलाना सैय्यद कल्बे आबिद नकवी साहब (ताबा सराह)

यूँ तो जमाने में हज़ारों इंकैलाब आए। दुनिया ने सैकड़ों करवटें बदलीं, नहीं मालूम कितनी आज़ाद कौमें गुलाम बनीं और कितने गुलामों ने तौकें गुलामी उतार फेंका। बड़ी-बड़ी खूनी जंगें हुई, कितनी ही आबादियाँ वीरानों और वीराने बस्तियों में बदल गये। ऐसे भी सुधार करने वाले इस बुराई से भरी दुनिया में आए जिन्होंने बगैर तीर चलाए, बगैर तलवार को नियाम से निकाले जंजीरों और बेड़ियों का इस्तेक़बाल करके तारीख़ के धारे मोड़ दिये, इन्सानी तरज़े फ़िक्र को बदल दिया।

लेकिन वाक़ेआ-ए-कर्बला अपने अनोखे अन्दाज़, अछूते तरीक़े, बेमिसाल कुर्बानियों और मक़सदे कुर्बानी की अहमियत, अपने बाद छोड़े हुए असरात के लिहाज़ से अब तक लाजवाब रहा है और आगे भी बेमिसाल रहेगा। कर्बला के दिल हिला देने वाले अज़ीम हादसे से पहले मुसलमान चन्द ही साल में अपने रसूल की बताई हुई तालीम को भुला चुके थे।

बराबर जुल्म व ज़्यादती ने उनके एहसासात मुर्दा कर दिये थे रसूल (स0) की आँखें देखे हुए, अली (अ0) की सीरत परखे हुए, हसन (अ0) के हुस्ने अख़लाक़ को आज़माए हुए मुसलमान अब इतने गिर चुके थे, उनकी हिम्मतें इतनी पस्त हो चुकी थी कि बदअख़लाक़ियों व दरिंदगियों के इन्तिहाई मुज़ाहरे और ख़िलाफ़ते रसूल (स0) के नाम पर होने वाले शर्मनाक तमाशे और तो और सहाबियत का दावा करने वाले अफ़राद तक की

रगे हमिय्यत को न हिला सकते थे।

लेकिन कर्बला के चटियल मैदान में जुल्म व सितम का आख़िर वक़्त तक मुक़ाबला करके रगे गर्दन कटाने वालों ने रोब व जुल्म की छायाई हुई बदलियों को छोट दिया और कुफ़्र के फैलाये हुए गुबार को इस तरह हटा दिया कि इस्लाम का आफ़ताब फिर अपनी अगली चमक-दमक के साथ आलम को रौशन व मुनव्वर करने लगा। मरने वाले मर गये लेकिन मुसलमानों के एहसासाते मुर्दा को ज़िन्दा कर गये। उन्होंने अपनी जानें दीं मगर ज़ुराअते मोमिन में जान डाल दी, फिर ज़ालिम की दिखवटी शान व शौकत व इज़्ज़त की परवाह न करते हुए सरे दरबार उसे टोका जाने लगा फिर शौक़े रसन व दार उभर आया। फिर नेज़ों को दिल में जगह देने, तलवारों को गले लगाने, ख़न्ज़रों को चूमने का शौक़ जाग गया। जैसे कर्बला की जंग सिर्फ़ कुछ घन्टे में ख़त्म हो गयी लेकिन नहीं मालूम यह लड़ाई किस अन्दाज़ से लड़ी गयी थी कि आज चौदह सदी के बाद भी हर मुफ़क्किर को अपने अन्दाज़े फ़िक्र के लिहाज़ से और हर तालिबेइल्म को अपने ज़ौक़े तलब के मेयार पर बहुत कुछ मिल जाता है। मैं जानता हूँ कि हुसैन (अ0) का मक़सद उस अज़ीम कुर्बानी से एक था और सिर्फ़ एक यानी इस्लामी तालीमात को उसकी सही बनावट में बाकी रखना। मक़सदे रिसालतमॉब (स0) की हिफाज़त करना और इस तरह रिज़ा-ए-इलाही हासिल करना मगर इस मक़सद के लिए (कुदरत के इशारे और इल्हामे रब्बानी) अन्दाज़े जंग कुछ ऐसा अख़्तियार किया

गया कि तन्हा यही वाक़ेआ हर सोंचने समझने वाले के लिए फानूसे हिदायत बन गया। कौन बड़े से बड़ा फलसफ़ी और ज़माने का अल्लामा है जो किसी मुख़्तसर मज़मून नहीं बड़ी से बड़ी किताब में भी तमाम तालीमाते हुसैनी को एक जगह घेर सके। आइये आज हुसैनी दर्सगाह से कुछ दर्स लेने की कोशिश करें।

वलीद के बैअत के मुतालबे पर इमाम मदीना छोड़कर मक्के का सफ़र करते हैं। शायद इसलिए कि पहाड़ों से घिरा होने की वजह से मक्का बचाव करने की जंग के लिए ज़्यादा ठीक था या इसलिए कि हरमे खुदा होने की वजह से मुसलमान दूर-दराज़ मक़ामात से आते रहते थे लिहाज़ा मुख़्तलिफ़ इस्लामी शहरों से ताल्लुक़ पैदा करने के ज़्यादा मौक़े थे। लेकिन यह क्या कि जब अतराफ़े आलम से मुसलमान हज की गर्ज से जमा हो रहे थे। इमाम हुसैन (अ०) ने मक्का को भी ख़ेरबाद कह दिया। इमाम ने अपने इस तरीक़े से यह सबक़ दिया कि अल्लाह की निशानियों की क्या अज़मत है? जैसे आपने फरमाया हो कि मैं बेपनाह मुसीबत बर्दाश्त कर लूँगा। सफ़ीन-ए-अहले हरम को जुल्म व सितम के थपेड़ों के सुपुर्द कर दूँगा लेकिन हरमे रसूल और हरमे खुदा की अज़मत बर्बाद न होने दूँगा। मक्का से रवाना होते वक़्त इमाम (अ०) के साथ साथियों की अच्छी ख़ासी तादाद थी एक छोटा सा लश्कर साथ था। बज़ाहिर चाहिए था कि रास्ते में जिन-जिन बस्तियों से गुज़रते कामियाबी की उम्मीदें दिलाकर लोगों को साथ लेते जाते, ओहदों की लालच देकर दूर-दूर से बाअसर लोगों को मदद के लिए बुलाते। उस बादशाह का मुक़ाबला था जिसकी हदें सलतनते अरब व अजम को फ़ाँद कर अफ़रीका और हिन्दुस्तान तक पहुँच चुकीं

थीं। मगर इमाम ने आम दुनियातलब सियासतदानों के रास्ते से अलग हटकर जो साथ थे उनमें से भी बहुत सों को ज़ाहिरी फतह और कामयाबी से मायूस करके अपने से जुदा कर दिया ताकि मालूम हो जाए कि जो दुनिया तलबी में साथ होगा वह दिरहम व दीनार से मायूस होकर साथ छोड़ भी देगा और जो मक़सद की अहमियत को महसूस करके साथ होगा वह हर तूफ़ाने बला के मुक़ाबले में चट्टान बन जायेगा।

अभी कुछ ही दूरी तय की थी कि ख़बरे शहादत जनाबे मुस्लिम मिली। अहलेबैत (अ०) की पहली सफ़े मातम बिछी। इमाम ने मुस्लिम की यतीम बच्ची को बुलाकर कुछ ऐसा मुज़ाहेर-ए-शफ़क़त फरमाया कि बच्ची ने घबराकर पूछा क्यों चचा मेरे बाप की तो ख़ैर है? यह मुज़ाहेर-ए-मुहब्बत तो आप यतीमों से फरमाते हैं। यह बज़ाहिर एक एक छोटा सा वाक़ेआ है लेकिन इससे यह पता चलता है कि इमाम का यतीमों और बे वाली वारिस अफ़राद से क्या अन्दाज़ था अपने बच्चों के मुक़ाबले में भी, यतीमों से ऐसा अलग अन्दाज़े शफ़क़त था कि आगोश में पाली हुई बच्ची फौरन होशियार हो गयी। मुसलमानों को इमाम के इस तरीक़े से सीखना चाहिए कि वह यतीमों और बे वारिस अफ़राद से क्या बर्ताव करें। अभी कूफ़ा पहुँचने में चन्द मन्ज़िलें बाकी हैं कि हुर का पैग़ाम रास्ता रोक लेता है। फौजे दुश्मन इमाम के मुक़ाबले में डट जाती है। इमाम देखते हैं कि दुश्मन के जितने सिपाही हैं सब प्यास से बेहाल हैं। घोड़ों तक की ज़बानें मुँह से बाहर हैं। किसी मौक़े परस्त सरदार लश्कर के लिए इससे बढ़कर कौन सा मौक़ा था। एक ही हमले में थके हारे और प्यास से परेशान लश्कर के क़दम उखड़ जाते मगर इमाम ने हुक्म दे दिया

कि जितने प्यासे हैं उन सबको सैराब कर दिया जाए, खुद अपने आप से सिपाहियों को पानी पिलाकर अपनी फौज का पानी का ज़खीरा ख़त्म कर दिया। दुनिया परस्त जो चाहें कहें लेकिन अपने इस अमल से मुअल्लिमे अख़लाक़ ने नर्मी और मुरव्वत और इंसानी हमदर्दी का वह लाजवाब सबक़ दिया है जो क़यामत आने तक याद रहेगा और तारीख़े आलम जिसका जवाब पेश करने से मजबूर रहेगी।

हुसैनी फौज दुश्मन के लश्कर को कोहनियों और हाथों से ढकेलती हुई ज़मीने कर्बला तक पहुँच गयी। लश्कर का पड़ाव पड़ गया। हुसैनी ख़ेमे नहर के किनारे लगा दिये गये दुश्मन का पैग़ाम आता है कि ख़ेमे नहर के किनारे से उखाड़ दिये जाएँ। इस जगह पर सरदारों फौजे यज़ीदी का क़याम होगा। बहादुरों के तयोरियों पर बल पड़ गये, शेर बिफ़र गये, सिपाहियों के हाथ क़ब्ज़ों पर गये। लेकिन इमाम (अ0) ने सर झुका कर कहा : अच्छा अगर यही ज़िद है तो हम अपने बच्चों को लेकर तपते रेगिस्तान में क़याम कर लेंगे मगर अपनी तरफ से जंग में पहल न करेंगे। देखने वाले देखें कि इमामे हुसैन (अ0) ने किस सलामत रवी और सुलहजोई का मुज़ाहेरा फरमाया है और यह बताया है कि इन्सान को इम्कान की आख़री हदों तक मार-काट से दामन बचाना चाहिए।

सअद का नहस बेटा कर्बला में सामने आता है। सुलह की बात की शुरुआत होती है। इमाम अपनी तरफ से नर्म से नर्म शर्तें पेश करते हैं। खुद उमरे सअद के से दुश्मन को भी इमाम के सुलह पसन्द रवैय्ये का इब्ने ज़ियाद को अपने भेजे हुए ख़त में इकरार करना पड़ा। सुलह की बात-चीत इब्ने ज़ियाद की हटधर्मी की वजह से

नाकाम हुई। दुश्मन की फौज ने 9 मोहर्रम को अस्त्र के वक़्त इमाम के ख़ेमों की तरफ हमला कर दिया। इमाम (अ0) की ख़्वाहिश पर मुशकिल से एह रात की मोहलत मिली।

इल्मे इमामत से नज़र हटाते हुए भी ज़ाहिरी हालात के लिहाज़ से अब बचने की कोई सूरत न थी दुश्मन की लातादाद फौज ने इमाम के गिन्ती के साथियों को हर तरफ से घेरे में ले लिया था। इस हालत में नतीजा मालूम था। अब तो जितनी भी जल्द जंग ख़त्म हो जाती उतनी ही मुसीबतें कम से कम रहतीं। कम से कम मुजाहिद रात और दिन की सख़्त गर्मी की नाक़ाबिले क़यास शिद्दत से महफूज़ रह जाते लेकिन इमाम एक रात की मोहलत खुदा की इबादत के लिए माँग कर हर मुसलमान ख़ासतौर से मोमनीन को सबक़ देते हैं कि नमाज़ और तिलावते कलाम मजीद का कैसा ज़ौक़ व शौक़ होना चाहिए।

पूरी रात इबादत में गुज़ारने वाले मुजाहिद इमामे वक़्त की इक्तेदा में तयम्मुम से सहरी का फ़रीज़ा अदा करते हैं। दुश्मन के तीर मुसल्लों पर गिर कर पैग़ामे जंग लाते हैं। बूढ़े जोशे शुजाअत में, जवान और बच्चे जिहाद के शौक़ में बड़ों के साथी बनते हैं, झुकी हुई कमरें पटकों से कस कर बाँधी जाती हैं, सुफूफ़े जमाअत सफ़े जंग में बदलती हैं मगर जो मसावात का सबक़ नमाज़ ने दिया था अब भी बाकी है। हबशी व आका गुलाम पहलू बपहलू होकर, शाने से शाना मिलाकर दुनिया को मसावात का सबक़ देते हैं।

मुजाहिद ज़ख़्मों पर ज़ख़्म खाकर गिरने लगे इमाम (अ0) ने जिस तरह हाशमी बच्चों, मासूमों के पाले हुए अकबर व कासिम औन व

मुहम्मद के सर ज़ानों पर रखे। इसी तरह गुलामों को भी यह सरफराज़ी हासिल हुई कि रूमी और हब्शी गुलामों ने जन्नत के जवानों के सरदार के ज़ानों पर सर रख कर जान दी।

एक हब्शी गुलाम जो बहादरी में झूमता हुआ आगे बढ़ा, दस्तबस्ता अर्ज़ की। मौला मरने की इजाज़त हो। इमाम ने निगाहे मुहब्बत डालकर फरमाया : ऐ जौन जब तक आराम व राहत थी, हमारे साथ रहे अब क्या ज़रूरत कि हमारी वजह से अपने को मुसीबत में डालो। मैं खुशी से इजाज़त देता हूँ जहाँ चाहे चले जाओ। गुलाम के तेवर बदले, वाह मौला वाह आपकी बदौलत हमेशा तो नेमतों से फाएदा उठाया, आपके दस्तरख़्वान के टुकड़े तोड़ता रहा और मुसीबत के वक़्त साथ छोड़ दूँ। यह गुलाम को दुनिया वालों की निगाह में अपनी ज़िल्लत का एहसास था लिहाज़ा दस्तबस्ता अर्ज़ की। मौला मैं जानता हूँ मेरा खून काला है, जिस्म से बदबू आती है, हसब न नसब पस्त है मगर खुदा की क़सम अपने बदबूदार जिस्म का यही काला खून बनी हाशिम के पाक व पाकीज़ा खून में मिलाकर रहूँगा।

जौन घोड़े से गिरे। इमाम सरहाने गए, दुआ के हाथ बुलन्द किए। मालिक! जौन को अपने रंग की सियाही और जिस्म की बदबू का बहुत एहसास था। पालने वाले! इसके जिस्म की सियाही को नूर से और बदबू को खुशबू से बदल दे। दुआ-ए-इमाम (अ0) का असर यूँ ज़ाहिर हुआ कि शोहदा-ए-क़र्बला में किसी जिस्म में नूर न था बदन में खुशबू न थी मगर इस बाग़े शहादत में भी मुत्ताज़ तरीक़े पर जौन का जिस्म महक रहा था और नूर का

कुब्बा हर निगाह को अपनी तरफ़ मुतवज्जह कर रहा था।

अस्हाब दरज़-ए-शहादत पर फाएज़ हो चुके। अक़रबा भी शहीद हो चुके, अली अकबर मैदाने जंग में बाप को आवाज़ देते हैं। नौजवान फरज़न्द शबीहे पैग़म्बर बूढ़े बाप के सामने दम तोड़ रहा है, बरछी की खटक पहलू बदलवा रही है, फातिमा (स0) का दूध खून बनकर हुसैन (अ0) की निगाह के सामने जारी है ऐसे वक़्त में किस इन्सान के होश व हवास ठीक रह सकते हैं लेकिन जब बहन घबराकर खेमे से निकली तो हुसैन (अ0) ने जवान की मैय्यत रख दी। आँसू पूछ डाले, धड़कते दिल को संभाला और ज़ैनब (स0) को अबा का साया करके खेमें में पहुँचाकर मुसलमान औरतों को पर्दे की अहमियत बतायी।

आफ़ताब ढलते-ढलते नुक़्ता अस्र पर पहुँचा। इमाम (अ0) मैदाने जंग में अकेले और तन्हा खड़े हैं।

न लश्करे न सिपाहे न कसरतुन नासे
न अकबरे न अली असगरे न अब्बासे

दाएँ और बाएँ देख कर आवाज़ देते हैं :-

अमा मन नासिरिन यन्सुरना

अमा मन दानत युद्नीना अन्ना

अमा मन मुगीसु युगीसुना

मौला! क्या अब भी उम्मीद थी कि बदबूख़्त लश्कर में कोई हक़ की आवाज़ सुन सकेगा। क्या कुफ़्र व जुल्म के सियाह दिल में नूरे हिदायत के आ जाने की भी गुन्जाइश है?

□□□

हुसैन^{अलैहिस्सलाम} और हम

अल्लामा नज्म आफन्दी साहब (ताबा सराह)

क्या हुसैन (अ0) की अजीमुशशान शहादत का राज़ कुछ रुख़सारों पर बहने वाले आँसुओं में छुपा है, क्या चालीस रोज़ सीनाज़नी और एक रोज़ की फाकाकशी हुसैन (अ0) की अदमुल मिसाल कुर्बानी का नतीजा हो सकती है?

क्या कर्बला के दिल हिला देने वाले तास्सुरात की दुनिया इस क़दर महदूद समझी जाए? क्या हुसैन (अ0) और हुसैन (अ0) के बच्चों का खून सिर्फ़ इस मक़सद के लिए पानी की तरह बहाया गया था कि एक रोने वाला गिरोह तैयार किया जाए?

बराए खुदा यह कौन सा फलसफा है कि हुसैन (अ0) इसलिए शहीद किए जाएँ कि हुसैन (अ0) पर रोने वाले पैदा हों।

क्या हमारी सियाहकारियों के दफ़्तर धोने के लिए हुसैन के खून की ज़रूरत थी। कौन है जो इन सवालों का जवाब हॉ में दे सकता है?

हुसैन (अ0) को क्यों शहीद किया गया?.....हुसैन (अ0) दुनिया से क्या चाहते थे? हुसैन (अ0) से दुनिया क्या चाहती थी?.....हुसैन (अ0) ने यह कुर्बानियाँ क्यों गवारा कीं?

क्या सिर्फ़ हुसैन (अ0) पर रोना हुसैन (अ0) की मेहनत का सही एतराफ़ है। हुसैन (अ0) के करोड़ों मातम करने वालों में कितने लोग हैं जिन्होंने कभी इन मसाएल पर गौर करने की तकलीफ़ बर्दाश्त की है? यह दो चार सवाल हैं

जिन पर इस शहीदे आज़म की यादगार में क़लम उठाने की ज़ुराअत कर रहा हूँ। हुसैन (अ0) को क्यों शहीद किया गया? यह कोई राज़ नहीं है, न कोई ऐसा पुरपेच मसला है जिस पर बड़ी-बड़ी मोटी किताबें लिखने की ज़रूरत हो। हुसैन के कब्ज़े में कोई सलतनत न थी जिसके लिए किसी हुकूमत के खिलाफ़ तलवार उठायी थी। न कोई पोशीदा रेशादवानी की थी। हुसैन (अ0) एक अच्छे आदमी होकर रहे।

यही उनकी शहादत का क़वी सबब था। अगर हुसैन (अ0) (मआज़ल्लाह) बुरे हो सकते, बुरे बनाए जा सकते, तो हुकूमत की तलवार उनकी गर्दन से दूर रहती। मुझे कोई पेचदार बात कहनी नहीं है मैं जो कहूँगा सादे लफ़्ज़ों में और सामने की बात जिसके लिए न क़लम की मअरका आराई दरकार है न मन्तिकी दलाएल। हुसैन (अ0) दुनिया से क्या चाहते थे? हुसैन दुनिया से अपने लिए कुछ नहीं चाहते थे। दुनिया के पास हुसैन (अ0) के काबिल कुछ न था। हुसैन (अ0) के पास वह सब कुछ था जो दुनिया के पास न था और जिसकी दुनिया को ज़रूरत थी। हुसैन (अ0) इन्सान को सही माने में इन्सान देखना चाहते थे। हुसैन (अ0) से दुनिया क्या चाहती थी। यह कि हुसैन (अ0) भी हम में से एक फर्द हो जाएँ। हुसैन की हस्ती सिर्फ़ कौल से ही नहीं अमल से भी यह बताती थी कि खुदा है और यह ख़तरनाक था उन लोगों के लिए जिनकी मसलेहत यह चाहती थी कि खुदा नहीं है। कहाँ यह ज़ब्बा

कि हमारे लिए सब कुछ हो, कहाँ यह तालीम कि सबके लिए हो चाहे तुम्हारे लिए कुछ न हो। हुसैन (अ0) शहनशीनों को मेहराबे इबादत बनाना चाहते थे। लोग थे कि मेहराबे इबादत में दर्जे कायम कर रहे थे। मसावात का लफ़्ज़ भी उन लोगों के लिए कड़वा था जिनकी ज़बानों को चटखारे लेने की आदत थी, जिनकी गर्दनें बुलन्द थीं, जिनके पेट भरे हुए थे, जिनका मकोला था 'तुम बाग़ लगाओ हम फल खाएँ' हुसैन (अ0) उनको गले से लगाकर जिनकी कमज़ोर गर्दनों पर लोग सवार थे, इस्लाम की उस तालीम को याद दिलाते थे जिसके भुलाने की कोशिश में पचास साल का लम्बा ज़माना ख़र्च किया गया था।

अमन व आमान के शहज़ादे हुसैन (अ0) की ख़ामोश ज़द्दोज़ेहद, ख़ून की बारिश और तलवारों की झंकारों से न बदलती अगर हुसैन (अ0) से यह चाहा जाता कि तुम भी तस्दीक़ कर दो जो कुछ हम कर रहे हैं वह हक़ है।

और हुसैन (अ0) ने यह कुर्बानियाँ क्यों गवारा की इसलिए कि किसी क़ौम के एहसासात जब मुर्दा हो जाते हैं तो जान देकर ज़िन्दा किये जाते हैं। तुम महकूम बनने के लिए पैदा किये गये हो जो हम दें वह ले लो। ग़नीमत यह है कि हम तुमको इस फ़िज़ा में साँस लेने देते हैं जिसमें हम साँस ले रहे हैं, हमारी आँखों से देखो, हमारे कानों से सुनो और हमारी ज़बान से बोलो। इस माहोल और आबो हवा में परवरिश पाए हुए लोगों की इस्लाह कोई आसान काम न था। हुसैन (अ0) आने वाले ख़तरे से आगाह थे और अगर मा फौकुलआदत कुव्वत से नज़र भी हटा ली जाए तो आसार व कराएन बता रहे थे कि वह होने वाला है जो हुआ। हुसैन के पास वक़्त भी था और रास्ते भी खुले हुए थे सिर्फ़ इराक़ का रास्ता न था।

मुमकिन था कि हुसैन (अ0) अरब के हुदूद से निकल जाते।

लेकिन यह हुसैन (अ0) ने नहीं किया। हुसैन (अ0) अगर मिनजानिब अल्लाह हिदायते ख़ल्क के लिए मामूर न भी होते तब भी दो बड़े सबब थे कि वह इस कुर्बानी के लिए अपने आपको तैयार करें।

क़ौम जो बिगड़ रही थी वह हुसैन (अ0) के नाना की बनायी हुई थी। यह भी न होता जब सुक़रात ख़ल्कुल्लाह की ख़िदमत के लिए ज़हर का ज़ाम पी सकता है तो हुसैन (अ0) तो फिर हुसैन (अ0) थे। मदीने में बैठकर मौत का इन्तिज़ार नहीं किया बल्कि कर्बला तक इस्तेक़बाल किया यह हुसैन की साँच थी कि उन्होंने अपनी शहादत के लिए कर्बला को पसन्द किया। कुछ लोगों ने हमदर्दी से हुसैन को रोका था कि मदीना न छोड़ें लेकिन हुसैन जानते थे कि बफ़र्जे मुहाल रसूल (स0) के रौज़े का एहतेराम भी किया गया (जिसके बज़ाहिर कोई आसार न थे) तो ज़हर का प्याला तैयार हो सकता था। मदीने की मस्जिद मौजूद थी, लेकिन किसी इब्ने मुल्जिम का मिल जाना भी नामुमकिन न था और कुतामा भी दस्तयाब हो सकती थी। और फिर तारीख़ सिर्फ़ दो लफ़्ज़ों में हुसैन की शहादत का तज़क़िरा करके ख़ामोश हो जाती और हुसैन (अ0) अपनी शहादत से जो काम लेना और जो असर पैदा करना चाहते थे वह न होता। असर पैदा करना मक़सूद था सिर्फ़ इतना ही नहीं कि क़ौम यह फैसला कर सके कि हुसैन (अ0) हक़ पर थे और यज़ीद नाहक़ पर, आलमगीर असर काएम करना था, एक ऐसी हुकूमत के खिलाफ़ जो आज़ादों को गुलाम बना रही थी, क़ौम की तबाही अख़लाक़ के ज़िम्मेदार और अपनी मसलहतों के मातहत इस तबाही व

बर्बादी की तकमील की कोशिशों में सरगर्म थी, वह जज़्बात जिन्हें ग़ैरत व हमियत के नाम से मौसूम किया जाता है और जो क़ौमों को उभारते हैं, बतदरीज फना होते जा रहे थे। लोग भूल चुके थे कि आज़ादी हमारा फ़ितरी हक़ है। नतीजा यह होता कि इस्लाम ने यही सिखाया था, हुसैन (अ0) की शहादत ने यह बता दिया बल्कि ज़हन नशीन कर दिया कि इस्लाम ने क्या सिखाया था। अब तुम कितनी ही तारीकी फैलाओ देखने वाले इस्लाम को हुसैन (अ0) की रोशनी में देख लेंगे। क्या सिर्फ़ हुसैन (अ0) पर रोना हुसैन (अ0) की मेहनत का सही एतराफ़ है।

मेरा असल मौजू यही है और मुझे इसी के मुताल्लिक़ कुछ कहना है। अगर क़ौम ठण्डे दिल से इस सवाल पर ग़ौर करे "क्या सिर्फ़ हुसैन (अ0) पर रोना हुसैन (अ0) का सही एतराफ़ है" तो बहुत मुश्किल है कि फ़ैसला "हाँ" पर हो सके।

हम ने (हुसैन अ0 की मातमदार क़ौम ने) "हुसैन (अ0) के करेक्टर से क्या असर लिया है" "गिरया" हुसैन (अ0) का नाम सुनकर रो दो लेकिन हुसैन (अ0) के अमल और उन तवक्कोआत से जो हुसैन (अ0) के नाम से वाबस्ता हैं कोई सरोकार न रखो। मज्लिसों को शाएरी का मैदान, दिलचस्प शाएराना सलीस तक्रीरों का मरकज़, सोज़ख़ानी और नौहाख़ानी का दंगल बना दो। यह हुसैन (अ0) की कुर्बानियों का माहसल है? जिस क़ौम में इतना बड़ा और अहम वाक़ेआ हो जाए जो एक आलम को दावते अमल दे रहा हो, तारीख़ जिसकी मिसाल न पेश कर सके, जिसका हर पहलू सबक़ लेने वाला और दर्से अमल की बेहतरीन मिसाल है। जो हर साल इस तरह ताज़ा किया जाता है जैसे आज ही का वाक़ेआ है, इस क़ौम से क्या उम्मीद करनी चाहिए। सिर्फ़

चन्द आँसू!! ज़रा से ग़ौर की ज़रूरत है। कौन सी क़ौम है जिसके हीरो ऐसी जोश पैदा करने वाली मिसाल छोड़ गए हैं। क़ौम बन जाती अगर जोश से काम लिया जाता और सीनाज़नी तक महदूद न रहता। इस से ज़्यादा किसी क़ौम व मिल्लत की बदनसीबी क्या हो सकती है कि कर्बला का सा अहम वाक़ेआ एक मज़हबी रस्म बन जाए। मैं मज्लिस व मातम, अलम व ज़रीह, मातमी जुलूस वग़ैरा का मुख़ालिफ़ नहीं हूँ, खुद अज़ादार हूँ मेरे घर में अज़ादारी होती है, मेरा अकीदा है कि यह मातमी जुलूस क़ौमों को हुसैन (अ0) और हुसैन (अ0) के ज़रिए से इस्लाम की तरफ़ ध्यान दिलाने के लिए बेहतरीन चीज़ें हैं। मुझे तारीख़ दानी का दावा नहीं, मैं एतमाद के साथ कह सकता हूँ कि यह मुज़ाहेरे का ज़बरदस्त उस्लू हम शीओं की ईजाद है मगर कम से कम ऐसा यह पुरअसर और शानदार मुज़ाहेरा किसी दूसरी क़ौम में नहीं देखा गया। इस क़ौम को क्या कुछ न होना चाहिए था और यही क़ौम आज कुछ नहीं है।

मैं यहाँ क़ौम की अख़लाकी हालत, आपस के बर्ताव, रवादारी, उमरा व गुरबा के ताल्लुकात, उनकी ज़हनियत इन मामलों पर तबसेरा नहीं करूँगा इस के लिए एक दफ़्तर की ज़रूरत है। मुझे सिर्फ़ चन्द क़ौमी मसाएल का ज़िक्र करना है और बस। हुसैन (अ0) मज़लूम और यज़ीद की जंग हक़ और नाहक़ की जंग थी। हम हक़ के तरफ़दार हैं और हुसैन के इसलिए मददाह हैं कि वह हक़ पर अड़ गए और हक़ के लिए अपनी ही जान नहीं बल्कि अपनी जान से ज़्यादा अज़ीज़ जानें भी कुर्बान कर दीं। लेकिन अमल तो दरकिनार आज हम में इतनी अख़लाकी ज़ुराअत नहीं कि

(बकिया पेज 23 पर)

सिजदा उस एक तेग तले का

फखरे मिल्लत डाक्टर मौलाना सैय्यद कल्बे सादिक साहब किब्ला

कुर्आन मजीद ने खुदाए वाहिद की परस्तिश व इबादत पर जिस क़द्र ज़ोर दिया है इतना ज़ोर और किसी बात पर नहीं दिया। उसने शिर्क को क़तई हैसियत से नाक़ाबिले माफी जुर्म क़रार दिया है। उस माबूदे बरहक़ की पैदा की हुई लामहदूद काएनात में हमारा पूरा निज़ामे शम्सी एक ज़र्रे की भी हैसियत नहीं रखता। इस मुख़्तसर से निज़ामे शम्सी के एक अदना तुफ़ैली सैय्यारा ज़मीन के एक छोटे से गोशे में अगर एक इन्तिहाई कमज़ोर व नातवाँ और फ़ानी मख़्लूक़ किसी ग़ैरे खुदा के सामने सरे इबादत झुकाती है तो उसकी इस हरकत से उस माबूदे हकीकी की लामुतनाही शहंशाहियत ममलकत व जबरुत को क्या ख़तरा पैदा हो सकता है कि वह हर जुर्म को नज़रअन्दाज़ करने पर तैयार हो मगर शिर्क को बर्दाश्त करने पर तैयार न हो।

बात दर अस्ल कुछ और है शिर्क से अल्लाह की पनाह ज़ाते ख़ालिक़ को कोई नुक़सान नहीं पहुँचता बल्कि शाहकारे ख़िलक़त व मस्जूद मलाएका इन्सान जब पत्थरों के सामने अपना सर ज़मीन पर रखता है तो अपने आपको जमादात से भी पस्त क़रार देता है जिस इंसान के क़ब्जे में पूरी दुनिया क़रार दी गयी है वह जब अपने आपको पत्थरों तक का मोहताज समझने लगता है तो अपने आप को "अहसनि तक्वीम" की मन्ज़िल से गिराकर "अस्फ़ला साफ़िलीन" की इन्तिहाई पस्ती तक पहुँचा देता है।

ताहम इंसान व इंसानियत को पस्त तरीन

मन्ज़िल तक पहुँचा देने वाली यह बुत परस्ती ख़ास जिहालत की पैदावार होती है। वही जिहालत जिसे रसूल (स0) ने इन्सान की सारी ख़राबियों की जड़ क़रार दिया है। इसलिए आफ़ताबे इल्म के तुलू होने के साथ ही इस किस्म की बुतपरस्ती की लौ माँद पड़ जाती है।

इस बुत परस्ती से ज़्यादा ख़तरनाक बुतपरस्ती वह होती है जब पत्थरों के बुत गोशत व पोस्त के बुतों की शक़ल में बदल जाते हैं और नमरूद व फिरऔन के ऐसे खुद पसन्द, नप्स परस्त, ज़ालिम व जाबिर फ़रमाँ रवा अपनी खुदाई और रुबूबियत का एलान करके ख़ल्के खुदा से अपनी बन्दगी व इबादत का इक़रार लेकर उनके तमाम इन्सानी हुकूक़ को सल्ब व ग़सब कर लिया करते हैं वह उनके माल व जान ही के मालिक नहीं बन बैठते उनकी औरतों की इज़्ज़त व आबरू तक के मालिक व मुख़्तार बन जाते हैं और अगर उनकी खुदाई को किसी पैदा होने वाले बच्चे से ज़रा ख़तरा पैदा होने का अन्देशा हो तो अपनी हुकूमत बल्कि रुबूबियत व उलूहियत को बचाने के लिए वह हज़ारों बच्चों को पैदा होने के साथ माँ के सामने ही ज़िह्न कर देने से बाज़ नहीं आते।

हमारे करीम व रहीम ख़ालिक़ ने पहली किस्म के बुतपरस्तों को अक्सर व बीश्तर सम्भल जाने को मौका भी दिया है अज़ाब में ताख़ीर भी की है मगर इस दूसरी किस्म की बुतपरस्ती को तहस-नहस करने में उसने कभी ताख़ीर नहीं की

इधर इस किस्म की बुतपरस्ती ने सर उभारा, उधर उसकी तलवार चली, नमरुद पैदा हुआ तो फौरन इब्राहीम (अ0) उसको खाक चटाने के लिए भेज दिये गये और फिरऔन ने अपनी खुदाई का एलान करके बनीइस्राईल को जुल्म व इस्तेबदाद का निशाना बनाया तो मूसा (अ0) अपना डण्डा सम्भाले उसके दरबार में घुस गये और उस वक्त तक करार न लिया जब तक उसकी उलूहियत का बेड़ा बहरे अहमर की मौजों में न डिबो दिया और कमज़ोर व नतवाँ बनी इस्राईल को चश्मे ज़दन में फिरऔनी ममलकत का वारिस व मालिक न बना दिया।

लेकिन खल्फ़े खुदा पर सबसे बड़ी मुसीबत उस वक्त पेश आती है जब यही नमरुदियत व फिरऔनियत यही नमरुदी व फिरऔनी नफस परस्ती व जाह परस्ती "लाइलाहा इल्लल्लाह" का ज़बानी इकरार करके खुदाए वाहिद के हकीकी परस्तारों की सफ़ों में शामिल हो जाती है और दीनदार अफराद की सादा लौही से फाएदा उठाते हुए आहिस्ता-आहिस्ता नियाबत और ख़िलाफ़ते रसूल (स0) के ऐसे मुक़द्दस मन्सब को मुलूकियत व शहंशाहियत की शक्ल दे देती है।

इस्लामी शरीअत लोगों के जान, माल, इज़्ज़त, आबरू, अक़ल, दीनी आज़ादी और नस्ल की हिफ़ाज़त को अपने बुनियादी मक़ासिद करार देती है वह दुनिया में सिर्फ़ अदल, इन्साफ़, मसावात और आज़ादी की हुक़मरानी देखना चाहती है और सद्दे अव्वल में उन्हें इक़दार को समाज में जारी करने के लिए जिस मुसलसल जिहाद का अहद मुसलमानों से लिया जाता था उस अहद को इस्लामी इस्तेलाह में बैअत कहा जाता था मगर जब ख़िलाफ़त ने मुलूकियत की शक्ल इख़्तियार कर ली तो मुसलमानों से जिहादे हक़

पर बैअत लेने के बजाए बादशाह सलामत की गुलामी पर बैअत ली जाने लगी और मुसलमानों से राहे हक़ के सिपाहियों की वर्दी उतरवा कर उन्हें लिबासे गुलामी पहनाया जाने लगा।

लेकिन चूँकि आज़ादी के मतवालों को गुलाम बनाने का यह सारा खेल परचमे लाइलाह से ज़ेरे साया और मस्जिदों की छाओं में अन्जाम दिया जा रहा था इसलिए इस्लाम की मुहब्बत में डूबे हुए मुसलमान सिर्फ़ ज़ाहिर को देखते रहे उसी नुमाइशी इस्लाम के पीछे छुपे हुए फिरऔनियत व नमरुदियत के चेहरों को न देख सके।

इस किस्म की नाम निहाद इस्लामी मुलूकियत में सब कुछ होता है। दुलहन की तरह पैरास्ता मस्जिदें होती हैं, मुतल्ला व मुज़हहब कुर्आन होते हैं। मस्जिदों में हुकूमतों के तनख़्वाहदार इमाम होते हैं। शानदार हसीन व जमील मिम्बर होते हैं मगर साथ ही हुकूमत के वज़ीफ़ा पाने वाले सही मगर क़ारी भी होते हैं और मिम्बरों पर क़ाबिले ख़रीद व फ़रोख़्त सही मगर ख़तीब भी नज़र आते हैं यह सब होता है मगर वह मक़ासिद व इक़दार कहीं नहीं दिखायी देते जिनको आम करने के लिए इस्लाम आया था। ज़ाहिरी चमक-दमक तमतराक़ होता ही इसलिए है कि मुसलमान बस इन ही चीज़ों के देखने में ऐसा मगन रहे कि कुचले हुए समाजी इन्साफ़, पिंसी हुई इस्लामी मसावात और चूर-चूर आज़ादी-ए-बशर पर उनकी नज़र न पड़ सके। चुनानचे परचमे तौहीद के बिलकुल नीचे और मस्जिदों के ज़ेरे साया इस्लामी दौलत सिर्फ़ चन्द ख़ानदानों में सिमटती रही। हुकूमत के ख़िलाफ़ हल्की सी ज़बान खोलने वालों की ज़बानें खिंचती रहीं। हक़ व इन्साफ़ की बात करने वालों को

सरेदार लटकाया जाता रहा। ज़रा-ज़रा से शक पर अफराद ही नहीं ख़ानदानों को तहे तैग़ किया जाता रहा, घर, घर वालों पर गिराये जाते रहे मगर चूँकि यह सब "लाइलाहा इल लल्लाह" और तकबीर के नारों की गूँज में हो रहा था इसलिए लोग इसी को इस्लाम समझते रहे।

दरअसल इस्लाम, कुर्आन, मेहराब और मिम्बर की आड़ में छुपे हुए नमरूद और फिरऔन की गिरेबान पर हाथ डालने के लिए बसीरत भी दरकार थी और शुजाअत भी इस लिए 60 हिजरी में जब वारिसे अम्बिया नवास-ए-रसूल (स0) हुसैन इब्ने अली (अ0) से यज़ीद की बैअत का मुतालबा हुआ तो हुसैनी बसीरत यूँ सामने आयी कि आपने यह नहीं फरमाया कि मैं यज़ीद की बैअत नहीं करूँगा बल्कि आपने इरशाद फरमाया कि : "मुझ जैसा शर्ख़स तुझ जैसे शर्ख़स से बैअत नहीं कर सकता।" इस एक जुम्ले में सिर्फ़ इन्कारे बैअत नहीं है बल्कि इन्कारे बैअत की पूरी तारीख़ सिमटी हुई है। इस जुमले का मफहूम यह है कि मेरे ऐसों ने यज़ीद ऐसों की बैअत तारीख़ के किसी दौर में नहीं की है यानी मुझ से बैअते यज़ीद का मुतालबा करने वालों पहले तारीख़े इब्राहीम, मूसा, ईसा (अ0) और खुद रसूल (स0) की सीरत को देख लो। अगर इब्राहीम (अ0) ने नमरूद के सामने सर झुका दिया होता, अगर मूसा (अ0) फिरऔन के सामने सिजदे में गिर गए होते, अगर ईसा (अ0) ने रोमन इम्पायर की गुलामी का इकरार कर लिया होता और अगर हुज़ूर मुश्रीकीने मक्का के सरदारों के सामने सरे इताअत झुका देने पर तैयार हो गये होते तो मैं भी यज़ीद की बैअत कर लेता। हुसैन (अ0) का जुमला खुद बता रहा है कि इमामे वक़्त ने मिम्बरों, मस्जिदों, और सुनहरे कुर्आनों की पीछे

छुपे हुए फिरऔन व नमरूद को पहचान लिया था यानी जब फिरऔनियत व नमरूदियत रुबूबियत की खुली हुई शक़ल होती है तो माबूदाने बातिल के दअ्वा-ए-खुदाई के जवाब में लाइलाहा कहा जाता है और जब यही ख़बासतें इस्लाम के लिबास में ज़ाहिर होती हैं तो "ला युबायिअु मिसलिह" का नारा बुलन्द किया जाता है, हक़ के नुमाइन्दों की तारीख़ यह है कि वह बातिल के सामने कभी सर नहीं झुकाते न इबादत की शक़ल में न बैअत की सूरत में।

बसीरत के बाद अब शुजाअत की नौबत थी शुजाअत तलवार खींचने ही का नाम नहीं उसकी रूह, सब्र और कुव्वते बर्दाश्त है हुसैन (अ0) ने मुतालब-ए-बैअत के जवाब में ला कहकर इन्कारे बैअत किया तो अपने ऊपर आने वाली मुसीबत को नज़रों के सामने रख लिया था और मुकाबले के लिए अपने आपको तैयार कर चुके थे। मदीने में नाना का मज़ार, माँ की कब्र, भाई की कब्र छोड़ना पड़ी, छोड़ दी, जिसने बहुत से हज पैदल किये थे उसे ऐन हज के मौक़े पर हुरमते काबा बचाने के लिए हज को छोड़ कर मक्का को ख़ैरबाद कहना पड़ा, ख़ैरबाद कर दिया। राहे कूफ़ा में अपने चचा के बेटे हज़रत मुस्लिम बिन अक़ील की कूफ़ा में मज़लूमाना शहादत की ख़बर मिली, सब्र व शुक्र के साथ सुन ली फिर इब्ने ज़ियाद के लश्कर ने हुर की सरबराही में हुसैन का रास्ता बन्द किया तो हुसैन ने दुश्मन के प्यासे लश्कर पर अपने पास मौजूद पानी की सबील खोलकर इस्लामी इक़दार के पैधों की आबियारी की। दूसरी मोहर्रम को कर्बला पहुँचे, सातवीं मोहर्रम से पानी बन्द कर दिया गया। शबे आशूर को एक रात की मोहलत ली जो सिर्फ़ इसलिए थी कि एक तरफ़ जी भरकर

इबादत कर लें तो दूसरी तरफ अपने सिपाहियों को खुली आज़ादी दे दें कि जो जाना चाहे वह जा सकता है न किसी पर कोई ज़ब्र है और न कोई पाबन्दी जो साथ रहे वह यह समझकर रहे कि कल अपनी जान नहीं इस्लाम के बचाने का मरहला सामने होगा। सुब्हे आशूर हुई तो हुसैन (अ0) ने मैदाने जंग से शहीदों के जनाज़े उठाना शुरू कर दिये, अपने हों या ग़ैरे बनी हाशिम, आज़ाद हों या गुलाम सबके साथ एक बर्ताव, एक रवैय्या एक तरह से क़दरदानी। जिस तरह अपने दम तोड़ते जवान बेटे के रुख़सार पर रुख़सार रखा उसी तरह दम तोड़ते हुए गुलामों जौन और वाज़ेह के रुख़सारों पर रुख़सार रखा। ज़ख़्म खाते रहे, लाशें उठाते रहे, प्यास भड़कती रही मगर चेहरे पर सुख़्की ही रही। हुसैन (अ0) क्या बैअत करते जबकि हुसैन (अ0) की गोद की पाली चार बरस की मासूम बच्ची तक ने हुसैन (अ0) की रुख़सते आख़िर के मौक़े पर यह मासूमाना फरमाइश तो की कि हमें नाना के रौज़े पर पहुँचा दीजिये मगर इस बच्ची तक ने यह न कहा कि बाबा यज़ीद की बैअत कर लीजिये कि चैन की सांस ले सकें।

अपनी शहादत से क़ब्ल हुसैन एक छः माह के प्यासे बच्चे को गोद में लेकर मैदाने कर्बला में आ गये। बज़ाहिर इसलिए कि बच्चे के लिए पानी का सवाल करें मगर हकीक़त में इसलिए कि फिरऔनियत के चेहरे पर पड़ी हुई इस्लाम की आख़री नकाब को भी तार-तार कर दें। सवाले आब पर बच्चे की कोमल गर्दन को तीर का निशाना बना दिया गया। यह तीर देखने में बच्चे के गले पर पड़ा था मगर हकीक़त में इस तीर ने यज़ीदियत के चेहरे पर इस्लाम की उस नकाब को तार-तार कर दिया था

जिसके पीछे फिरऔनियत का मकरूह चेहरा पनाह लिए हुए था।

अग्ने आशूर के लम्हे थे, कर्बला की झुलसती ज़मीन थी, जब ज़ख़्मों से चूर-चूर प्यास की शिद्दत से निढाल रसूल (स0) के नवासे हुसैन (अ0) ने अपना सर आख़री बार माबूद की बारगाह में सिजदा बजा लाने के लिए ज़मीन पर रखा। उर्दू के यगाना शाएर मीर की नज़र में यही सिजदा थी जब उन्होंने कहा :

शैख़ पड़े मेहराबे हराम में पहरों दोगाना पढ़ते हैं
सिजदा उस एक तेग़ तले का उनसे हो तो सलाम करें

हुसैन (अ0) सिजदे से खुद सर न उठा सके बल्कि किसी और ने काट कर नेज़ें पर उस सर को उठाया। इधर एक सूरज नेज़े पर तुलू हो रहा था उधर कर्बला के उफ़क़ पर आफ़ताब, गोश्-ए-मगरिब में डूब रहा था।

यह कहके डूब गया आफ़ताबे आशूरह

रहे हुसैन (अ0) की ता हशर रौशनी बाकी

ख़ेमे जला दिए गए। हुसैन (अ0) की लाश यज़ीदियों ने घोड़ों से पामाल कर दी। 11/मोहर्रम को हुसैन (अ0) के अहलेबैत (अ0) कैद करके शोहदा के कटे हुए सरों के साथ पहले सूबाई राजधानी कूफ़ा में इब्ने ज़ियाद के दरबार में ले जाए गए फिर उन्हें यज़ीद के पाय-ए-तख़्त दमिशक़ के सजे सजाए दरबार में लाया गया। ज़र में कमर गुलाम दस्तबस्ता खड़े थे। सिंध से लेकर स्पेन तक पर बनामे इस्लाम हुक्मरानी करने वाला डिक्टेटर कभी फतह व कामियाबी के आरज़ी नशे में चूर कभी कटे हुए सरों को देख कर मुस्कुराता था और कभी जंजीरों में जकड़े हुसैन (अ0) के बीमार बेटे जैनुलआबेदीन (अ0) को और

रस्सियों में जकड़ी बीबियों को देखकर कहकहे लगाता था।

फतह के बाजों की आवाजें दरबार के अन्दर आ रही थीं। यज़ीद ने रसूल (स0) की नवासी, अली (अ0) व फातिमा (स0) की बेटी, हुसैन (अ0) व अब्बास (अ0) की बहन ज़ैनब से कहा यह बाजों की आवाजें सुन रही हो, अब बताओ कि कौन जीता और कौन हारा। बहादुर बाप की शेर दिल बेटी ने इन्तिहाई खुदएतमादी के साथ जवाब दिया कि कौन हारा, कौन जीता यह

अगर देखना है तो ज़रा ठहर जा। अभी मस्जिदों के मीनारों अज़ान की आवाज़ बुलन्द होगी अल्लाह की किबरियाई और उसकी वहदानियत की आवाज़ गूँजेगी। हमारी जंग इस आवाज़ को बचाने के लिए थी थोड़ी देर बाद तेरे बाजे बन्द हो जाएँगे मगर आवाज़े अज़ान अब सुब्हे क़यामत तक दुनिया के गोशे-गोशे से बुलन्द होकर अल्लाह की बड़ाई और वहदानियत और रसूल (स0) की रिसालत के एलान के साथ हमारी फतह का भी एलान करती रहेगी। □□□

बकिया.....हुसैन (अ0) और हम

हक़ बात मुँह से निकाल सकें। मसलहतें अबा क़बा की दामनगीर हैं, हक़ बोलने का फल जो दुनिया से मिला करता है फितना व फसाद का लक़ब देकर फितने व फसाद के ख़ौफ़ की आड़ लिये बैठे हैं।

हुसैन (अ0) की मज्लिस में मोटे-मोटे आँसुओं से रोने वालों और दोनों हाथों से मातम करने वालों के सामने मशहदे मुक़द्दस का वाक़ेआ भी हुआ, नजफ़े अशरफ़ का भी, जन्नतुलबकी की बर्बादी भी देख ली, इन्हीं हाथों को वाक़ेआत पर पर्दा डालते और पालीटिक्स की आड़ अवाड़ लगाते भी देखा गया।

हुसैन (अ0) के अन्सार ने हुसैन (अ0) से यह अहद किया था "चाहे कुछ हो जाए हम हुज़ूर का दामन न छोड़ेंगे" आज इसी क़ौम के लोग हुसैन (अ0) के "मातम दार" "चाहे कुछ हो जाए" के पुरज़ोर अलफाज़ के साथ हुकूमत से वफादारी का अहद बाँधते हैं। क्यों? आज हुकूमत व रिआया में हक़ नाहक़ की जंग हो रही है और हमारी क़ौम हमेशा से

हक़ की तरफ़दार रही है।

ज़माने से पस्त और गिरावट की तरफ़ जा रही क़ौम, जिसमें न कोई स्प़िट है, न अख़लाकी ज़ुराअत तो वह उस वक़्त तक नहीं सम्भल सकती जब तक हुसैन (अ0) की अज़ीमुलमरतबत कुर्बानी के मक़सद से आँख छुपाती रहेगी। हुसैन (अ0) का खून तेरी बुराइयों के दफ़्तर धोने के लिए नहीं बहाया गया है। हुसैन (अ0) की शहादत हमारी नजात का ज़रीआ बन गयी है। अक़ीदे की सेहत में कलाम नहीं लेकिन इस तरह नहीं कि चार आँसू बहाए और जन्नत ख़रीद ली। ऐसे लोग भी होंगे जिन्होंने हुसैन (अ0) के हुस्ने अमल की रौशनी में सही रास्ता मालूम कर लिया वह हुसैन (अ0) की शहादत के मक़सद को समझ गए, उन्होंने हुसैन (अ0) के अख़लाक़ की पैरवी की और हुसैन (अ0) की शहादत उनकी नजात का बाअिस हो गयी। हुसैन (अ0) ने यही चाहा था अब क़ौम जो कुछ समझे।

नज्म कहते हैं शहादत जिसको उर्फ़ आम में यह हुसैन इब्ने अली का क़ौम को पैग़ाम है

□□□

जवाजे ताजियादारी

मौलाना सैय्यद कल्बे जवाद नक्वी साहब किब्ला मद्दजिल्लहुशरीफ

कालल्लाहु सुब्हानहू व तआला : “वमन युअज़्जिमु शआइरल्लाहि फइन्नहा मन तकवल कुलूब”

किताबे इलाही के मुताबिक अल्लाह की निशानियों की ताज़ीम दिलों की पाकीज़गी की अलामत है बल्कि ऐने इबादत है।

दरअसल कुछ चीज़ों में खुद अपनी ज़ाती कोई अज़मत नहीं होती लेकिन वही एक मामूली सी चीज़ जब किसी अज़ीम और काबिले एहतेराम ज़ात या चीज़ की तरफ मन्सूब हो जाती है तो खुद उसमें भी अज़मत और इज़ज़त पैदा हो जाती है एक आम फहम मिसाल से बात को इस तरह से समझाया जा सकता है एक मामूली सूत और धागे से पैर के मोज़े बुनते हैं और उनकी कोई इज़ज़त नहीं होती अगर हमारा मोज़ा रखा हुआ हो और किसी का पैर पड़ जाए तो हमें कोई परवाह नहीं होगी लेकिन उसी सूत और धागे से हमारा कुर्ता बनता है अगर वह कहीं रखा हुआ हो और कोई उसे पैरों से रौंदे तो उधर कुर्ते पर शिकन पड़ी इधर हमारे माथे पर शिकन पड़ जाएँगी अचानक ज़बान से निकलेगा “देखकर नहीं चलते? क्या आखें नहीं हैं?” मोज़े पर किसी का पैर पड़ा हमने ध्यान भी न दिया लेकिन अगर कुर्ते या कमीस पर पड़ा तो हमें बुरा लग गया मगर लड़ाइ झगड़े की नौबत नहीं आयी लेकिन अगर कोई टोपी या सर की पगड़ी रखी हुई है और किसी ने ठोकर मार दी तो अगर एहसास हुआ कि जानबूझ कर मारी है तो लाठियाँ बंदूकें निकल आएँगी और मारने मरने के लिए

तैयार हो जाएँगे। यह सब क्यों हुआ? अगर जिस माददे से मोज़े और जुराबें बनीं हैं उसी से कुर्ता बना है और उसी से सर की पगड़ी, फिर हमारे रद्दे अमल में फर्क क्यों हुआ? दरअसल सिर्फ निस्बत के बदल जाने से हमारा रवैया बदल गया। मोज़ों को क्योंकि पैरों से निस्बत है और पैर नीचे हैं इसलिए कोई इज़ज़त नहीं लेकिन कुर्ते को क्योंकि सीने से निस्बत है लिहाज़ा शर्फ पैदा हो गया लेकिन पगड़ी को सर से निस्बत है इसलिए सर की बुलन्दी से उसे बुलन्दियाँ मिल गयीं। इसी मिसाल से साबित होता है कि कुछ चीज़ों में ज़ाती इज़ज़त न होते हुए भी सिर्फ बुलन्द से निस्बत की वजह से अज़मत पैदा हो जाती है। दूसरी इससे बेहतर मिसाल यह हो सकती है कि ईंट, गारा, पत्थरों से हमने एक मकान बनाया और कहा कि यह हमारा मकान है तो कोई शर्फ पैदा नहीं हुआ लेकिन अगर उसी मसाले से एक दूसरा मकान बनाया, ईंटे भी वही हैं मसाला भी वही मुमकिन है मज़दूर और कारीगर भी वही हो लेकिन जब मकान बन के तैयार हुआ तो हमने कहा यह अल्लाह का घर है। मस्जिद से तो अहकाम बदल गए अब हालते नजासत में दाखिल नहीं हो सकते दाखिल हों तो दो रकात नमाज़े तहय्या मस्जिद में पढ़ें, जूते चप्पलें बाहर उतारें, दुनियावी गुफ्तगू मना है। सवाल यह है कि किस चीज़ ने यह फर्क पैदा कर दिया? अगर ग़ौर कीजिए तो सब कुछ वही है सिर्फ निस्बत बदल गयी क्योंकि अब निस्बत अल्लाह की तरफ है। इसलिए ज़मीन व आसमान का फर्क पैदा

हो गया। काबा भी उन्हीं पत्थरों से बना जिन से अरब के सब मकान बन रहे थे लेकिन जब इस घर को अल्लाह ने फरमाया मेरा घर है तो शर्फ इतना बढ़ा कि अम्बिया और अइम्मा के सर भी उसकी तरफ झुक रहे हैं। यह फर्क इसलिए हुआ कि मस्जिद बनायी तो हमने कहा यह अल्लाह का घर है खुद अल्लाह ने आकर नहीं फरमाया कि यह मेरा घर है लेकिन काबा के लिए जब लिसाने कुदरत ने खुद एलान किया कि यह मेरा घर है तो शर्फ की हद ही न रही।

तीसरी मिसाल यह दी जा सकती है कि आय-ए-मेराज में अल्लाह तआला ने इरशाद फरमाया : "सुब्हानल्लजी असरा बिअब्दिही" ले गया परवरदिगार अपने बन्दे को। इस सिलसिले में कहा गया कि अगर बन्दा कहा तो कौन सा शर्फ पैदा हो गया? सब ही अल्लाह के बन्दे हैं लेकिन गौर किया जाए तो बहुत फर्क है। हमारा अपनी ज़बान से कहना कि हम अल्लाह के बन्दे हैं यह और है और खुद लिसाने कुदरत किसी को मुहब्बत से कह दे मेरा बन्दा, तो बन्दगी को मेराज मिल जाती है। दूसरा फर्क यह है कि काबे में खुद अपने जाती फ़ज़ाएल न थे लेकिन जब अल्लाह ने उसे अपनी तरफ मन्सूब किया तो बहुत अज़मत बढ़ी मगर ज़मीन ही तक रहा लेकिन खुद रसूल (स0) में जाती फ़ज़ाएल भी मौजूद थे इसीलिए जब अल्लाह ने अपनी तरफ मन्सूब किया तो "काबा क़ौसैन औ अदना" की मन्ज़िल तक पहुँच गये।

इन मिसालों से पता चला कि निस्बत की बड़ी अहमियत है। यह न देखिये किस चीज़ से है यह देखिये निस्बत किसकी तरफ है अब यह न कहिये कि ताज़िये को क्यों चूमते हो अलम के

फ़रहरे की इतनी ताज़ीम क्यों है? यह तो मामूली कागज़ और बाँस की तीलियों से बने हैं, अलम का फ़रहरा आम कपड़े का बना हुआ है मैं कहता हूँ कि यह देखो निस्बत किसकी तरफ है। ताज़िये को निस्बत है रौज़-ए-इमामे हुसैन (अ0) की तरफ और अलम मन्सूब है अब्बासे अलमदार (अ0) से। इसी निस्बत से अज़मत पैदा हुई जिसने उन्हें सर पर रखने और आँखों से लगाने के लाएक बना दिया।

ताज़िया बनाने की हुरमत के सिलसिले में अमीरुलमोमिनीन हज़रत अली (अ0) का एक कौल पेश किया जाता है : "मन जदददा क़ब्रन औ मस्सल मिसालन फकद ख़रज मिनल इस्लाम।" तो यहाँ मस्सल मिसालन से किसी जानदार की तस्वीर या मूरती बनाना मुराद है वरना एक लिबास को सामने रखकर दूसरा लिबास बनाना हराम हो जाता और एक मकान के माडल को सामने रख कर वैसा ही दूसरा मकान बनाना नाजाएज़ हो जाता, मोलवी साहब को अपनी शेरवानी या क़बा दर्जी के यहाँ नमूने के तौर पर भिजवाना बिदअत क़रार दिया जाता।

हाशिया बुख़ारी पर अल्लाम नूवी तहरीर करते हैं....."हमारे अस्थाब और दूसरे उलमा का कौल है हैवान की तस्वीर बनाना शदीद हराम है क्योंकि इसमें खुदा की मख़लूक से मुशाबेहत होती है लेकिन पेड़, ऊँट का कजावा या किसी ग़ैरे रूह की तस्वीर बनाना हराम नहीं है। इस तरह किसी ग़ैरे ज़ीरूह की तस्वीर रखना भी जाएज़ है।"

(हाशिया बुख़ारी जिल्द-2 पारह-28 पेज-880

मतबूआ निज़ामी, कानपुर)

अगरचे तिरमिज़ी शरीफ की एक रिवायत

से यह जाहिर होता है कि ज़ीरुह की शबीह बनाना भी जाएज़ है : "हज़रत आएशा फरमाती हैं कि जिब्रईल (अ0) मेरी तस्वीर एक रेशमी टुकड़े पर लाए और रसूल (स0) से कहा कि यह दुनिया और आख़रत में आपकी बीवी हैं।"

(जामे तिरमिज़ी जिल्द-2 पेज-228)

इसी तरह से सही बुख़ारी, सही मुस्लिम, सुनने अबुदाऊद, सुनने इब्ने माजा में रिवायत मौजूद है कि हज़रत आएशा के पास गुड़ियाँ मौजूद थीं जिनसे वह खेलती थीं। रसूल (स0) ने उन्हें देखा मगर मना नहीं किया। इसी तरह से हज़रत आएशा के पास एक घोड़े की मूर्ती भी थी जिसमें पर लगे हुए थे। रसूल (स0) ने देखा तो मुस्क्राने लगे और मना नहीं फरमाया।

(सुनने अबुदाऊद जिल्द-2 पेज-294)

कुर्आन मजीद में जनाबे सुलेमान (अ0) पैग़म्बर के लिए मौजूद है : "यअमलून लहू मा यशाउ मिन महारीबिवं व तमासीलिवं व जिफानिन कलजवाबि व कुदूरिरासियात"

(सूर-ए-सबा आयत-13)

अल्लामा बैज़ावी, जारुल्लाह ज़मख़शरी, जलालुद्दीन सुयूती वगैरा बड़े-बड़े मुफ़स्सरीन ने लिखा है कि यह असल में अम्बिया और फरिश्तों की तस्वीरें थीं और उनका मक़सद यह था कि इनको देखकर लोग ज़्यादा इबादत करें।

इस बात से यह नतीजा निकला है कि जिन चीज़ों से इताअत और इबादते इलाही का शौक पैदा हो उनकी शबीहें बनाना कुर्आन की रू से जाएज़ है जबकि खुद उन चीज़ों की इबादत ख़याल में न हो। तो हम कब ताज़िये, अलम या जुलजिनाह की इबादत करते हैं? बल्कि यह

तमाम चीज़ें निशानियाँ हैं उन कुर्बानियों की जो अल्लाह के रास्ते में दी गयीं जिनसे हकीक़त में इताअते इलाही और अल्लाह के रास्ते में कुर्बानी का जज़्बा जागता है।

काबा खुद बैठे मअमूर की शबीह है। इसी तरह हज के बहुत से अरकान जनाबे इब्राहीम व इस्माईल व जनाबे हाजरा के आमाल की शबीहें हैं। यह हरवला क्या है? जिस में एक ख़ातून की पैरवी में बड़े-बड़े जवाँ मर्द दौड़ते हुए चल रहे हैं दूसरे लफ़्ज़ों में अल्लाह की राह में एक माँ की कुर्बानी की शबीह बने हुए हैं तो अगर हम जनाबे अब्बास का अलम उठा रहे हैं जो एक अज़ीम वफ़ादार की कुर्बानी की यादगार है तो क्या हर्ज है? अब सवाल यह है कि यह कैसे साबित हो कि सारे तबररुकाते अल्लाह की निशानियाँ हैं। इसका जवाब यह है कि कुर्आन मजीद में इरशाद है : "वलबुदन जअलनाहा लकुम मिन शआरिल्लाह" हमने कुर्बानी के ऊँटों को तुम्हारे लिए अल्लाह की निशानियाँ करार दिया है। शआएर बहुवचन है शआरा की और शआरा उस चीज़ को कहते हैं जो किसी की याद दिलाए या किसी चीज़ की निशानी हो। क्योंकि यह जानवर उस अज़ीम कुर्बानी की याद दिलाते हैं जो जनाबे इब्राहीम (अ0) और जनाबे इस्माईल (अ0) ने मिना में पेश फरमायी इसी तरह तबररुकाते अज़ादारी उस कुर्बानी की याद दिलाते हैं जो फख़रे इब्राहीम (अ0) और इस्माईल (अ0) इमामे हुसैन (अ0) ने कर्बला की सरज़मीन पर पेश फरमायी।



जनाबे जैनब का जुल्म-तोड़

जवाब

मु० २० आबिद

अन्धी शाम.....अन्धड़ों की राजधानी.
.....अन्धेर का अन्धेरा दरबार.....बरसाती
कीड़ों से बजबजाती चौपाटी,

चौपट राजा.....झूठ के नशे में
धुत्त, बेसुध, पापों से चकनाचूर जुल्म का
गुरुघन्टाल, अत्याचार अनर्थ करते करते थका
हारा, लूला लंगड़ा, काला-कलूटा, किस्मत
फूटा.....,

और सामने रस्सी में जकड़ा मानवता,
शराफ़त, सचाई का लुटा हुआ काफ़ला, रौशनियों
का रखवाला, धर्म का पालनहारा.....,

हवाएँ थमी हुई, सुनसानियाँ छायी हुयीं,
Nature उदास, धुवाँ-धुवाँ.....काली गद्दी
से नशीली आवाज़ गुँजती है.....धर्म
ईमान की खिल्ली उड़ाती, इन्सानियत की हंसी
उड़ाती, हंस की चाल दिखाती..... तो,

घुटन बढ़ चुकी है, न्याय सिसक रहा
है..... कहीं आसमान फट न पड़े.....

.....कहीं ज़मीन धंस न जाये.....
कहीं क़यामत न आ जाये.....

ऐसे में एक जियाली ललकार बढ़कर
ताक़त की कलाई मरोड़ देती है, (धर्म के जान
में जान आती है, और इन्सानियत के साँस में
साँस).....

पहचाना! ललकार कौन है? वही सच्चे
रसूल की अमानतदार नवासी, इस्लाम और
रसूल के उसूलों की रखवाली जैनब अली की

ज़बान में, माँ की शान से, दादा की आन से
बोल रही है:-

सारी हम्द, संस्तुति, तारीफ़ संसारों के
पालने वाले अल्लाह के लिए है। उसके भेजे हुए
रसूल और उनकी आल पर सलवात। खुदा ने
सच कहा है, "फिर जो बुराई करते थे, खुदा की
निशानियों (प्रतीकों) को झुटलाते थे और उनकी
खिल्ली उड़ाते थे उनका बुरा ही अन्जाम हुआ।"
ऐ यज़ीद, तू किस हवा में है? तूने हम पर ज़मीन
के रास्ते और आसमान के फैलाव बन्द कर दिये,
हम औरतों को बन्दी कर फिराया, तो क्या तू इस
ख़याल में है कि हम खुदा के नज़दीक ज़लील हो
गये और तू उसके नज़दीक बड़ा हो गया। तूने
जो हम पर यह जुल्म ढाया तो क्या सोचता है कि
तुझे उसके आगे शान और ऊँचाई मिल गयी!! तू
इस फेर में घमंडी की तरह घूर रहा है, खुशी से
बाहें मटका रहा है, इतरा-इतरा कर ट्विस्ट
(Twist) कर रहा है। तू इस बात पर फूले नहीं
समाता कि तूने दुनिया को अपने लिए बराबर कर
लिया है, अपने काम ठीक कर लिये हैं और तुझे
हमारी राजसत्ता बेखटके मिल गयी है। जल्दी
न कर, ज़रा दम तो ले। क्या तू यह भूल गया
है कि खुदा (कुर्आन मजीद में) कहता है कि
"यह हरगिज़ न सोचो कि मैंने काफ़िरों को
मुहलत दे दी है, और उन्हें जो कुछ यह ढील है
वह भली है, बल्कि हम उस गुट को लम्बे समय
तक छोड़ रखते हैं ताकि उनका गुनाह और बढ़े

और उनके लिए तो नीचा ज़लील करने वाला अज़ाब है। (3-175)

ऐ तुलका⁽¹⁾ (छोड़े गये दास/गुलाम) की औलाद! क्या यही तेरा न्याय इन्साफ है कि तूने अपनी औरतों और (यहाँ तक) अपनी लौंडियों को पर्दे में रखा और रसूल की बेटियों को बन्दी बनाकर घुमाया, उनका मान मिटाया, उन्हें बेपर्दा कर दिया। उन्हें दुश्मनों ने एक शहर से दूसरे शहर फिराया है। लोग उनके चेहरों को देखते हैं और पास व दूर के शरीफ व कमीने (ऐरे-गैरे) लोग उनके गालों को घूर-घूर कर तकते हैं, उस पर यह मुसीबत यह है कि इन बेचारों के आड़े आने वाला कोई रखवाला मर्द भी नहीं है। हाँ, उससे रियायत की क्या उम्मीद की जाय जिसके पुरखों⁽²⁾ के मुँह ने पाक लोगों का जिगर चबा के थूका हो और जिसकी खाल, गोश्त, शहीदों के खून से पली-पोसी हो!! क्यों यह हालत न हों! जो हमें बैर, नफ़रत जलन से देखता है, वह बैर करने में क्यों कमी करेगा। ऐ यज़ीद फिर तू गुनाह और बड़े मामले की परवाह न करके अपने पुरखों को याद करके कह रहा है कि वे मेरे पास आकर यह मन्ज़र देखकर खुशी से उछल पड़ते और कह उठते कि ए यज़ीद तेरा हाथ कभी न शल (बेकार) हो" जबकि तू जन्नत के जवानों के सरदार इमाम हुसैन (अ0) के दाँतों से बेअदबी कर रहा। ऐ यज़ीद! तू क्यों न खुश हो और ऐसी बातें क्यों न कहें क्योंकि तूने घाव को गहरा कर दिया है और पाक पौधे को जड़ से उखाड़ फेंका है यानी मुहम्मद (स0) की पाक औलाद का खून बहाया है। और मुहम्मद (स0) की आल (औलाद) और अब्दुलमुत्तलिब की सन्तान के उन लोगों को जो

ज़मीन पर तारों के समान थे मार डाला है और अपने पुरखों को इस पर पुकारता है। बस तू बहुत जल्दी उनसे मिल जायेगा। और उस समय तू आरजू करेगा कि काश! दुनिया में तेरे हाथ ही न होते और न ही तेरी ज़बान कि जो कुछ किया न करता और जो कुछ कहा न कहता। फिर जनाबे ज़ैनब ने आसमान की ओर मुँह उठाकर कहा:- मेरे खुदा! हमारे हक़ का बदला ज़ालिमों से ले और हम पर सितम करने वालों से तू ही खुद बदला ले। जिस जिस ने हमारा खून बहाया, और हमारे जवानों को मार डाला उस उस पर अपना ग़ज़ब (प्रकोप) ढा। ऐ यज़ीद, खुदा की कसम जो तूने बेइन्साफी की (और बुरा किया है) वह अपने ही साथ किया, तूने अपनी ही खाल फाड़ी है और अपना ही गोश्त काटा है। तू रसूल (स0) के सामने मुजरिम की तरह लाया जायगा कि तूने उनकी सन्तान का खून बहाया है और उनकी औलाद का मान मिटाया है। उस समय खुदा उनकी परेशानी को दूर कर देगा, उनकी बेकली को सुकून चैन में बदल देगा और सताने वालों से उनका बदला लेगा। तू यह हरगिज़ न सोच कि खुदा के रास्ते में मारे जाने वाले मुर्दा हैं बल्कि वे ज़िन्दा हैं और अपने पालने वालो से रोज़ी जीविका पाते हैं।⁽³⁾ और फिर खुदा का इन्साफ (जजी) करना, रसूल (स0) की दावेदारी और जिब्रईल की पैरोकारी तेरी सज़ा के लिए काफी है। जिसने तेरे राज़ को बराबर किया और तुझे मुसलमानों के सरों पर थोपा वह जल्दी ही जान जायगा कि ज़ालिमों का (खोट करने वालों का) का क्या बुरा बदला मिलता है और तुम लोगों में किसका ठिकाना बुरा है और किसके साथी और

कुमक करने वाले कमज़ोर और हल्के (बेकार) हैं। और हालाँकि इस जीवटपन और बेबाकी से तेरे मुँह लगना मुझको खुद दुख दे रहा है, सता रहा है फिर भी मैं तो तुझे तुच्छ, कम्बख्त ही समझती हूँ और जो तू हमें सता रहा है और बुरा बर्ताव कर रहा है उसे बहुत बड़ा समझती हूँ। दुख है कि आँखें रोती हैं और सीने दुख से भुन रहे हैं। हैरत है खुदा का दल शैतान के हाथों मार डाला गया, दुश्मनों के हाथों से हमारा खून अब तक टपक रहा है और उनके मुँह से हमारे गोश्त की बिसान्द आ रही है, और जंगली भेड़िये उन पाक जिस्मों पर मण्डला रहे हैं। ऐ यज़ीद! अगर हमें उजाड़ने में ही तूने ग़नीमत (लूट का माल) पाया है, तो कल क़यामत के दिन तू सिर से घाटे में पड़ेगा जब अपने बुरे कामों को छोड़ कर तेरे हाथ कुछ न लगेगा। खुदा (अपने) बन्दों पर जुल्म नहीं करता। खुदा से ही शिकायत फरयाद है और उसी पर भरोसा है। ऐ यज़ीद! जितना छल मक्कारी करना चाहे कर ले और अपने जतन से बाज़ न आ और जितना सताना है सता डाल लेकिन खुदा की कसम तू हमारी याद हमारी चर्चा को मिटा नहीं सकता और न ही तू अपनी बदनामी को धो सकता है। तेरी राय, तेरी सोच तो बस फुसफुसी और ढीली है, तेरे दिन तो बस गिनती के हैं। तेरी पूँजी उस दिन तो परेशानी बेचैनी के सिवा कुछ न होगी जब पुकारने वाला आवाज़ लगायगा, "हाँ हाँ ज़ालिमों पर खुदा की लानत (फिटकार-धितकार)"।

खुदा की तारीफ है (शुक्र है) जिसने हमारे पहले पर भलाई और हमारे आख़री पर शहादत की मुहर लगायी (यानी उन पर ख़त्म कर दी)। मैं खुदा से यह दुआ माँगती हूँ कि उनका (हमारे शहीदों) का सवाब पुण्य पूरा कर और उनके बदले को बढ़ा दे (भाव बढ़ा दे)। हम में जो (ज़िन्दा) बच रहे उन का भला कर। वह तो दया वाला, मेहरबान और चाहने वाला है। हमें तो अल्लाह ही काफी है जो अच्छा वकील है।

और फिर चारों ओर हू का सन्नाटा छा गया.....

अन्धेर नगरी का चौपट राजा चौपाट (Flat) हो चुका, चुप्पी साध चुका था.....

सितम के थके हारे हाथों में हथकड़ियाँ पड़ चुकी थी.....

पापों के पैरों तले से ज़मीन निकल चुकी थी.....

जुल्म की नींव खोखली हो रही थी इतराता हुआ घमण्ड सिस्कियाँ ले रहा था.....

और करता भी क्या?

नाचते इतराते अन्धरे की धज्जियाँ उड़ रही थी।

और.....

सच सच्चाई चैन की चादर तान चुकी थी।

नबियों की मेहनतें दुआएँ दे रही थी।

इस्लाम के माथे का पसीना शाबाशी दे रहा था।

- (1) रसूल (स0) ने मक्का जीतने के दिन यज़ीद के दादा अबुसुफयान को यह कहकर छोड़ दिया था कि जाओ तुम अब छोड़े गये गुलाम हो।
- (2) यज़ीद की दादी ने बद की लड़ाई में होने वाले शहीद जनाब हमज़ा (रसूल स0 के चचा) का जिगर चबाया था।
- (3) कुर्आन मजीद

ख़ानदाने इज्तेहाद और अज़ादारी

सै० मुस्तफ़ा हुसैन नक्वी 'असीफ जायसी'

अनुवादक : काज़िम महदी नगरौरी

हज़रत आदम (अ०) ने जब से ज़मीन पर क़दम रखा तब ही से ज़मीन पर ज़िक्रे इमामे हुसैन (अ०) और उनके मसाएब पर आहो बुका का सिलसिला शुरू हो गया उसके बाद जितने भी अम्बिया-ए-किराम दुनिया में हिदायते इन्सानी के लिए आए उन्हें ज़िन्दगी के किसी न किसी मोड़ पर ज़िबर्ईल के ज़रिए हुसैन (अ०) मज़लूम की अज़ीम कुर्बानी व मुसीबत की तरफ ज़रूर ध्यान दिलाया गया और उन्होंने मुस्तक़बिल की उस बड़ी मुसीबत पर गिरिया करके बताया कि मुसीबत पर गिरिया बिदअत नहीं बल्कि मज़लूम का तज़किरा इन्क़िलाब का बाअिस और ज़ालिमों की शर्मिन्दगी और जुल्म के ख़ात्मे का सबब है शायद इसी लिए शायर कहता है :-

“नार-ए-इन्क़िलाब है मातमे रफ्तगाँ नहीं”

और अगर कभी किसी फितरत के दुश्मन ने कह भी दिया कि:-

“वह रोएं जो कातिल है ममाते शोहदा के

हम ज़िन्द-ए-जावेद का मातम नहीं करते”

तो फौरन ख़ानदाने इज्तेहाद का रुकने रकीन अपने आबाई फरीजे के तहत ऐसी सोच रखने वालों को सिर्फ़ ख़ामोश ही नहीं करता बल्कि हमेशा के लिए दावते फ़िक्र भी यह कहकर दे देता है कि :-

क्या रोओगे उनको जो हलाके अबदी हैं

क्यों ज़िन्द-ए-जावेद का मातम नहीं करते”

(सैय्यदुल उलमा)

अदीबे आज़म मौलाना सैय्यद मुहम्मद

बाकिर शम्स अपनी किताब “हिन्दुस्तान में शीअियत की तारीख़” में लिखते हैं :-

“ताज़ियादारी का वजूद हिन्दुस्तान में बहुत पहले से था। दक्षिण में आशूरख़ाना, सिंध में इमाम बारगाह थी। उत्तरी भारत में फूस और कपड़े के इमामबाड़े मुहर्रम में बनते थे। दस दिन के लिए पक्की इमारत की क्या ज़रूरत थी। रुलाने वाली नज़में अकेले और चन्द आदमी मिलके राग से पढ़ते थे। मौजूदा ज़माने की सोज़ख़ानी उसी की यादगार है, इससे सिर्फ़ सवाब हासिल करने के और कोई फाएदा न था। वह भी जबकि शरअी हद के अन्दर हो, जुलूस भी निकलते थे जिनमें शहनाई, रौशन चौकी, तबल, ताशा, झाँझ बजते और माही मरातिब (मछली और चौपायों के सर चाँदी और पीतल के बाँसों पर लगे हुए) के साथ बुराक और गुम्बद ताज़ियों की जगह होते थे, कुछ-कुछ दूर पर ठहर-ठहर के बाँक और पटे को दिखाते और या हुसैन (अ०) की आवाज़ बुलन्द करते। उन रस्मों के बजा लाने में सारे मुसलमान एक ही तरह शरीक थे।

गुफ़रानमआब (रह०) ने रौशन चौकी और शहनाई को गाने-बजाने के आले होने की वजह से हराम और तबल को जंगी बाजा होने की वजह से जाएज़ करार दिया, झाँझियों और माही मरातिब के बदले अलम, गुम्बद की जगह ताज़िये और बाँक और पटे का फन दिखाने के बजाए सीनाज़नी और हुसैन (अ०) हुसैन (अ०) को रिवाज दिया।

हाज़री, मेहंदी और नज़र व नियाज़ ऐसी

रस्में काएम कीं, मुहर्रम के दस दिन में हर दिन एक शहीद के ज़िक्र से ख़ास किया। मजलिसों में इराक़ की रौज़ा ख़्वानी के तरीक़े पर जाकरी शुरु की। जिसमें अहलेबैत अलैहिमुस्सलाम के फ़ज़ाएल में हदीसों भी मसाएब के साथ बयान की जाने लगीं। इस तरह मजलिस की इफ़ादियत बढ़ गयी और उसमें तबलीगी पहलू पैदा हो गया। और इन रस्मों को इतना आम कर दिया कि घर-घर मजलिस और गली-गली ताज़िये उठने लगे। इस तरह उन्होंने शीओं की ताज़ियादारी को एक नयी शक़ल देकर आम मुसलमानों से अलग कर दिया। और इससे मज़हबी तबलीग़, क़ौमी तनज़ीम और शीओ तमद्दुन की तश्कील की।

इस सिलसिले में एक कमी जो इराक़ व ईरान में है उन्होंने यहाँ उसको पूरा किया। इराक़ व ईरान के उलमा मजालिसें पढ़ना अपनी शान और मर्तबे के ख़िलाफ़ समझते हैं, इसका नतीजा यह हुआ कि जाकरी जिसे वहाँ रौज़ा ख़्वानी कहते हैं कम पढ़े लिखे लोगों का काम रह गया। और उसमें कोई तरक्की न हो सकी। हिन्दुस्तान में मजालिसों में मरसिया पढ़ा जाता था। उनका ख़याल था कि मजलिस शाएराना कमाल दिखाने की जगह नहीं है इसमें फ़ज़ाएल व मसाएबे अहलेबैत (अ०) बयान होना चाहियें। उन्होंने वाक़ेआते कर्बला पर मोतबर रिवायतों का एक बड़ा ज़ख़ीरा "इसारतुल अहज़ान" के नाम से पेश किया। और आशूर के दिन अस्त्र के बाद खुद मजलिस पढ़ने की शुरुआत की, इस तरह हिन्दुस्तान के उलमा में उन्होंने यह सुन्नत काएम की कि उनके बाद उनके जानशीन यह मजालिस पढ़ते रहे। आज भी यह मजलिस उसी वक़्त उनके इमामबाड़े में होती है। अब यहाँ के उलमा को जो हकीक़त में उन्हीं की औलाद थे, इस पर एतराज़ और इससे बचाव की क्या हिम्मत हो सकती थी।

नतीजा यह हुआ कि कस्सत से उलमा मजालिसें पढ़ने लगे।"

हज़रत गुफ़रानमआब ने ग़लत रसमों को मिटाकर कर अज़ाए सैय्यदुश्शोहदा (अ०) को शरओ निज़ाम के साथ फ़रोग़ दिया। साथ ही अकसर इमामबाड़ों से पहले अपने हाथ से अज़ाख़ान-ए-हुसैनी का संगे बुनियाद रखा। और पहले पहल मजालिस की बुनियाद रखी बल्कि हज़रत सुलतानुल उलमा रिज़वानमआब को इजाज़-ए-इज्तेहाद व वसीयतनामे में अज़ादारी में मसरूफ़ रहने की वसीयत भी फरमायी। (तर्जुमा अरबी इबारत) "यानी ऐ फ़र्ज़न्द! मैं तुम्हें जनाबे सैय्यदुश्शोहदा ख़ामिसे आले अबा सिब्ते रसूलुस्सक़लैन हज़रत इमाम हुसैन (अ०) की जाँसोज़ मुसीबत पर रोने, पीटने की वसीयत करता हूँ ख़ास तौर से उस ज़माने में जबकि उनके सर क़लम किये गये, उनके छोटे-छोटे बच्चे ज़िबह किये गये। उनके हरमे मोहतरम क़ैद किये गये और कूचे व बाज़ार में उनकी तौहीन की गयी।"

हज़रत गुफ़रानमआब ने 1200 हिजरी से लखनऊ को मरकज़ बनाकर तमाम हिन्दुस्तान में जिस तरह शीओयत की तबलीग़ व इशाअत का काम अन्जाम दिया उसी तरह अज़ादारी को फैलाने और उसके असर और फाएदे को बढ़ाने में अपनी निगाह जमाए रखी। इसलिए आप ने एक अज़ाख़ाना अपने वतन नसीराबाद में बनवाया और फिर दूसरा अज़ाख़ाना 1227 हिजरी में लखनऊ में बनवाया जिसके साथ एक मस्जिद भी तामीर फरमायी।

शम्स लखनवी लिखते हैं कि :- "गुफ़रानमआब ने मजालिसों के मुनअक़िद करने पर ज़ोर दिया खुद भी इमामबाड़ा बनवाया और उसको सामाने आराइश से भरने के बजाए मजलिसों का एहतेमाम किया और हदीसख़्वानी पर ज़्यादा ध्यान दिया।"

हुसैनिया-ए-गुफ़रानमआब की तामीर और मजलिस को तक्रीबन दो सौ साल पूरे होने को हैं। इसके पहले ज़ाकिर खुद गुफ़रानमआब (रह0) हैं, दूसरे ज़ाकिर आपके बड़े बेटे हैं जो अवध में हुकूमते शरअिया की बुनियाद रखने वाले भी हैं और जिन्होंने दीनदारी और अज़ादारी को और ज़्यादा बढ़ाया। सुलतानुल उलमा नव्वरल्लाहु मरक़दहू अस्मै आशूर को मिम्बर पर नंगे सर तश्रीफ़ ले जाकर मसाएब का तज़किरा फरमाते थे जिनके कुछ जुमले मजलिस में कोहराम मचा देते थे। सुलतानुल उलमा के बाद मलिकुल उलमा मग़फ़िरतमआब ने यह सुन्नत काएम रखी उनके बाद मलाजुलउलमा मौलाना सैय्यद अबुलहसन उर्फ़ बच्छन साहब किब्ला इस अस्म की मजलिस को अपने इन्तिहाई असर वाले अन्दाज़ में पढ़ते रहे और फिर बहरुलउलूम मौलाना सैय्यद मुहम्मद हुसैन उर्फ़ अल्लन साहब किब्ला तो एक मुजतहिदाना रंगे ज़ाकिरी के बानी हुए जिनके बाद से वह फ़र्क़ जो उलमा व ज़ाक़रीन के बीच था, बहुत हद तक ख़त्म हो गया। मौलाना शम्स लिखते हैं कि :- "बहरुलउलूम ने ज़ाकिरी के फन में इंक़लाब पैदा किया। हदीस व तफ़सीर और फलसफ़ियाना मूशिगाफ़ियों से तक्रीर को इल्मी बनाकर मौजूदा ज़ाक़री के अन्दाज़ के ईजाद करने वाले हुए।" बहरुलउलूम के ईजाद किए हुए ज़ाक़री के अन्दाज़ को ख़ानदाने इज्तेहाद से मुताल्लिक ज़ाकिर, ख़तीबे आज़म अल्लामा सैय्यद सिब्वे हसन नक़वी फातिर जाएसी ने आसमान पर पहुँचा दिया। और ख़तीबे आज़म ज़ाक़री के अहदे शबाब ही में "ज़ाकिर शामे ग़रीबों" के लक़ब से सज कर उमदतुलउलमा मौलाना सैय्यद कल्बे हुसैन नक़वी मुजतहिद ने ज़ाक़री शुरू की। और कुछ ही अरसे में आलमी शोहरत के मालिक ज़ाकिर हो गये।

उमदतुलउलमा ने तक्रीबन साठ साल ज़िक़्रे फ़ज़ाएल व मसाएबे अहलेबैत (अ0) बयान फरमाए और 1926 ई0 से आख़िर ज़िन्दगी तक दुनिया भर में सुनी जाने वाली मजलिसे शामे ग़रीबों पढ़ी। हयातुल्लाह अन्सारी का बयान है कि :- "उन्हें अलफाज़ के पैकर सजाने के साथ उनको ज़ज़्बात की रुह अता करने का भी सलीका था।"

साहेबे मतलउल अनवार तहरीर फरमाते हैं कि "मौलाना कल्बे हुसैन साहब को खुदा ने कुव्वते बयान और ख़िताबत का मलका अता किया था इसलिए मिम्बर को ज़ीनत बरख़्शी और दिनबदिन तरक्की करते गए। मुताला और मेहनत से अपने बुजुर्गों के सामने शोहरत और नामवरी के मदरिजे आलिया तै किए। हर अन्जुमन उन्हें अपना सरपरस्त जानती थी। बर्रे सगीर के हर गोशे तक उनकी आवाज़ पहुँचती थी। शीआ एजीटेशन में उनकी क़ैद और सुन्नी शीआ स्टेज पर उनकी तक्रीर, शीओं की लीडरी और सुन्नियों से इत्तेहाद उनकी शख़्सियत का रौशन पहलू है। इन सिफ़ात ने उन्हें हैरतअंगेज़ महबूबियत बरख़्शी थी। जनाब नज्मुल मिल्लत और नासिरुल मिल्लत के बाद मरजेईयत में उनकी ज़ात अकेली हो गयी थी। उनकी सबसे बड़ी मसरुफ़ियत मजलिसें थीं। वह बर्रे सगीर के गोशे-गोशे में पहुँचे मगर जुमे के दिन आसिफ़ुद्दौला की मसजिद में नमाज़ हर हाल में अदा की। मुहर्रम में अश्र-ए-मजलिस की गिनती दुश्वार है लेकिन गुफ़रानमआब के इमामबाड़े और छोटी रानी के अज़ाख़ान-ए-इक़बाल मंज़िल की मजलिसें यादगार थीं। ख़िताबत में उनका तरीक़ा बहुत दिलक़श था। उनका लहजा नर्म, अन्दाज़े बयान सादा, ज़बान साफ़ और मीठी, मतलब लतीफ़ और आम फ़हेम और आलेमाना कौसर की रवानी, सलसबील का बहाव, मिम्बर

का वकार और आवाज़ का धीमापन, न चीख न पुकार, न दबी हुई सदा, हज़ारों की भीड़ मगर दूर-दूर तक आवाज़ पहुँच रही है। आवाज़ के साथ सुनने वालों का ज़हन हाज़िर, दुरुद व दाद, गिरया व फरयाद, जब चाहा रुला दिया फिर मसाएब में न बनावट न फ़ज़ाएल में शोर। यह मालूम होता था जैसे समुन्द्र की सतह पर हवा के झोंके हल्की-हल्की मौज पैदा कर रहे हैं।"

ख़तीबे आजम के अहद में ख़ानदाने इज्तेहाद के एक और बड़े मुहक्क़ यानी हकीमुल उम्मत अल्लाम-ए-हिन्दी सैय्यद अहमद नक़वी मुजतहिद भी अपने इल्म व फन्ने ख़िताबत से ज़माने को फाएदा पहुँचा रहे थे और कुछ वक़्त के बाद तो सैय्यदुल उलमा अल्लामा सैय्यद अली नक़ी नक़वी साहेब किब्ला ने कमाले एहतियात व तहकीक़ से ज़ाकरी को मेराज ही अता कर दी।

अल्लामा सैय्यद सईद अख़्तर गोपालपुरी "खुर्शीदे ख़ावर" में लिखते हैं कि :- "सैय्यदुलउलमा की ख़िताबत का एक ख़ास रंग था। जो इब़ारत सजाने और सस्ती नुक्ता आफरीनी के बजाए इल्म और तहकीक़ पर मबनी था और एक घण्टे की मजलिस में हकाएक़ व मआरिफ़ के कितने दरवाज़े खुल जाते थे। उनकी तक़रीर व तहरीरमें बहुत कम फर्क़ होता था। दूसरी ख़ास बात उनकी तक़रीरों में यह थी कि हर मज़हब व मिल्लत का मानने वाला उसे दिली सुकून के साथ सुन सकता था और फाएदा उठा सकता था। किसी जुमले से किसी के दिल दुखाने का ख़तरा नहीं था।"

और इसी दौरे तहकीक़ व तबलीग़ में ज़ाकिरे शामे ग़रीबाँ उमदतुल उलमा के दो बेटों यानी आकाए शरीअत सफ़वतुल उलमा मौलाना सैय्यद कल्बे आबिद नक़वी इमामे जुमा लखनऊ ताबा सराह और मुफ़क्किरे इस्लाम डाक्टर सैय्यद कल्बे सादिक़ साहब किब्ला ने भी तबलीगे दीन के साथ अज़ादारी के फैलाने के

लिए ज़ाकरी का सहारा लिया और हद है कि सफ़वतुलउलमा ने अज़ा के ही काम में शरबते शहादत भी नोश फरमा लिया।

ख़ानदाने इज्तेहाद के तमाम लोगों के घर-घर अज़ाख़ाने हैं ही लेकिन साल भर के लिए ज़ियारतगाहे आम व ख़ास की हैसियत जिन अज़ाख़ानों को हासिल है वह हुसैनिय-ए-गुफ़रान मआब के अलावा, हुसैनिय-ए-जन्नतमआब, हुसैननिया-ए-मौलाना अली नक़ी और कर्बलाए मेहदी मुनसिफ़ुद्दौला की तामीर करायी हुई हैं। ख़ानदाने इज्तेहाद के जिन तारीख़साज़ ज़ाकिरों का पिछली सतरों में ज़िक़्रेख़ैर हुआ है उनके अलावा भी हर अहद में बाकमाल ज़ाक़ेरीन व वाएज़ीन, मरसिया गोयान व मरसिया ख़ानान हज़रात की एक अच्छी ख़ासी तादाद थी और खुदा का शुक्र है कि आज भी हिन्द व पाक में उलमा व खुतबा-ए-ख़ानदाने इज्तेहाद "ख़ालिक़ की तौहीद और ख़लाएक़ के इत्तेहाद" के तहत खुदा के दीन की ख़िदमत और अज़ाए सैय्यदुशशोहदा की तबलीग़ में मसरूफ़ हैं और इन्शाअल्लाह कयामत तक मसरूफ़ रहेंगे। आकाए शरीअत के बाद से तालीमाते इस्लामी के अज़ीम मरकज़ हुसैनिय-ए-हज़रत गुफ़रानमआब में काएदे मिल्लते जाफरिया मौलाना सैय्यद कल्बे जवाद नक़वी साहब (इमामे जुमा लखनऊ) अशर-ए-मजालिस और इसी अज़ाख़ाने में ईजाद की हुई मजलिसे शामे ग़रीबाँ को ख़िताब फरमा रहे हैं और ईमान को जगाने वाले व निफाक़ को ख़त्म करने वाले बयानात से मोमिनीने केराम फाएदा उठा रहे हैं। इस साल मौसूफ़ ने उलमा व खुतबा से ख़्वाहिश की है कि वह अपनी तक़रीरों से इत्तेहाद बैनुलमुस्लिमीन को ताक़त पहुँचाएं।

अज़ाए इमाम हुसैन अलैहिस्सलाम इत्तेहाद बैनुलमुस्लिमीन ही नहीं बल्कि इत्तेहादे इन्सानी का सबसे बड़ा और फाएदेमन्द ज़रिया है।

मिसाली दोस्त हबीब (अ०) इब्ने मज़ाहिर

हैदर अली (मुबल्लिग जामिआ इमामिया)

जनाबे हबीब, मज़ाहिर के बेटे थे जैसा कि उन्होंने रज्ज में फरमाया है कि "अना हबीब व अबी मज़ाहिर" और असदी कबीले के मशहूर आदमी थे रिवायतों में उन्हें रसूल (स०) का सहाबी भी माना गया। अमीरुलमोमिनीन हज़रत अली अलैहिस्सलाम और इमामे हसन अलैहिस्सलाम के ख़ास सहाबियों में से थे। और अस्थाबे सैय्यदुशोहदा इमामे हुसैन (अ०) में भी आप नुमायाँ मर्तबे और कूफ़े के शीओं में बुलन्द मक़ाम रखते थे।

मुआविया की मौत के बाद शीआने कूफ़ा की ख़्वाहिश हुई कि इमामे आली मक़ाम कूफ़ा तशरीफ लाएँ तो इस सिलसिले का पहला ख़त सुलेमान बिन सुरदे खुज़ाआ, मुसैय्यिब बिन नुहबह, रिफाआ बिन शदाद और हबीब इब्ने मज़ाहिर दूसरे शीओं के साथ और कूफ़ा के मुसलमानों की तरफ से फ़र्ज़न्दे रसूल (स०) के नाम भेजा गया था।

जब ऐलची-ए-इब्ने ज़हरा यानी जनाबे मुस्लिम कूफ़ा पहुँचे और मुख़्तार इब्ने अबी उबैदा-ए-सक़फी के घर पर ठहर गए तो वहाँ कूफ़ा के शीआ इकट्ठा हुए जिसमें मुस्लिम बिन अक़ील ने अपने आका हुसैन (अ०) का ख़त पढ़कर सुनाया इसके बाद जनाबे आबिस बिन शबीब शाकरी की तक़रीर हुई जिसमें उन्होंने सिर्फ़ अपनी तरफ से हर तरह की मदद का वादा फरमाया इसके बाद फौरन हबीब इब्ने मज़ाहिर ने अपनी मदद का बड़े अच्छे अन्दाज़ में एलान किया।

क़र्बला में नवीं मोहर्रम की शाम को जब यज़ीद के लश्कर ने इमाम (अ०) पर हमला करने का फैसला कर लिया बल्कि हमले के लिए बढ़ने लगा तो इमाम (अ०) ने अपने भाई अब्बास (अ०) से कहा कि उनसे उनके इरादे के बारे में बात करो तो जनाबे अब्बास (अ०) बीस सवारों के साथ जिनमें जुबैर इब्ने क़ैन और हबीब इब्ने मज़ाहिर भी थे मुख़ालिफीन के करीब गए और उनसे उनका मक़सद मालूम किया तो जवाब मिला कि इब्ने ज़ियाद का हुक्म आया है कि या तुम से बैअत ली जाए या जंग की जाए जनाबे अब्बास ने फरमाया कि मैं इमाम से पूछ कर बताता हूँ। जनाबे अब्बास (अ०) बारगाहे इमाम (अ०) की तरफ चले बाकी लोग अपनी जगह पर रुके रहे मौक़ा ग़नीमत जान कर हुसैन (अ०) का महबूब दोस्त हबीब अपनी दोस्ती के फ़राएज़ के एहसास के तहत मुख़ालिफ़ फौज को समझाना शुरू करता है कि तुम्हारा खुदा के यहाँ बहुत बुरा अन्जाम होगा इस बात पर कि तुमने आले रसूल (स०) और इबादतगुज़ारों का ख़ून बहाया लेकिन उन पर हबीब की नसीहत का कोई असर इसलिए नहीं हुआ कि उनके दिलों पर मुहर लग चुकी थी।

दोस्ती-ए-हुसैन (अ०) की दौलत से मालामाल जज़्ब-ए-नुसरत व कुर्बानी से भरे हुए हबीब को रोज़े आशूर इमामे वक़्त ने अपनी मुख़्तसर रुहानी फौज की टुकड़ी का सरदार मुक़र्रर किया। क़र्बला में जंग शुरू होते ही वह तिश्न-ए-जामे शहादत शख्स थे जो बुरैरे हमदानी के साथ सबसे पहले मुक़ाबले के लिए ललकारने

पर जिहाद के लिए तैयार हुए मगर इमामे वक्त की मर्जी की वजह से बड़ी समझ रखने वाले अपनी जगह पर रुक गए।

हज़रत इमामे हुसैन (अ0) जब अपने ईमानी लश्कर के साथ नमाज़े ज़ोहर पढ़ने के लिए तैयार हुए तो मुख़ालिफ़ फौज़ से नमाज़ की मोहलत माँगी गयी जिस पर हसीन लतीन ने बुलन्द आवाज़ से कहा नमाज़ पढ़ना हो तो पढ़ लो मगर वह कुबूल नहीं, बस इस गुस्ताख़ी को हबीब बर्दाश्त न कर सके और जवाब में फरमाया अरे तुझ जैसे शराब पीने वालों की नमाज़ कुबूल होगी और रसूल (स0) के बेटे जैसे परहेज़गार की नमाज़ कुबूल न होगी इस जवाब पर उस मलउन व शकी अज़ली ने हमला कर दिया हबीब ने उस पर वार किया वह ज़ख्मी हुआ लेकिन बच निकला फिर हबीब ने शौक़े शहादत में रज़ज़ पढ़ना शुरू

किया और फिर उस हुसैन (अ0) के मददगार ने अपनी खून भरी तलवार के जौहर दिखलाए और लड़ते-लड़ते हबीब के लिए एक वह वक्त भी आया कि हुसैन (अ0) की दोस्ती का दम भरने वाला जामे शहादत से सैराब हो गया यानी -

**ज़ीस्त की दौलत ही रख दी उसने पाए यार पर
उम्र भर की बेकरारी को करार आ ही गया**

सोगवाराना शान से इमामे हुसैन (अ0) लाशे हबीब पर पहुँचे और क्यों न पहुँते -

दोस्त की दोस्त ज़माने में ख़बर रखते हैं

मुख़्तसर यह कि हबीब का मर जाना हुसैन (अ0) इब्ने अली (अ0) के लिए मामूली मुसीबत न थी रिवायतों में है कि हुसैन (अ0) जैसे पक्के और मज़बूत इरादे और हौसले के मालिक मुजाहिद के चेहरे पर शिकस्तगी के आसार साफ़ नज़र आ रहे थे। □□□

NAAZ

Plastics

Deals in :-

Digital Print Glow Sign Board
Digital Frontlit Board
Digital Hoarding, Banner
All types of Digital Print,
Vinyl Cutting Plottor
Radium Digital Print

Add.: Maqbara Alia, Golaganj, Lko.
Contact : 9935084074, 9415001374
0522-2610558, 9935037849

Electronics

Deals in :-

Colour T.V.
Washing Machine
Refrigerator
DVD, VCD Player
Gyser, Blower & All types
of Electronic Goods.

Add.: Maqbara Alia, Golaganj, Lko.
Contact : 9935084074, 9415001374
0522-2610558, 9935037849,

Communication (Airtel)

Deals in :-

All types of
Post Paid, Pre Paid
New Model Handset with
Connection Available Here

Add.: Kamla Nehru Marg, Chowk,
Lucknow - 226 003
Contact : 9935084213, 9935084079

“और तक्वे का पहनावा ही अच्छा भला है।”

(सूर-ए-आराफ़)

घर और समाज में खुदा का डर (तक्वा)

(पिछले शूमारे से आगे)

हुज्जतुल इस्लाम हुसैन अन्सारियान
अनुवादक : मु0 र0 आबिद

तक्वे (संयम) की असलियत

तक्वा अरबी शब्द है जो 'वक्फ़' से निकला है। 'वक्फ़' के माने खुद को बचाए रखने और खुदा की हराम की हुई चीज़ों से बचे रहने और परहेज़ करने का है।

तक्वा सच में एक ऐसा हौसला और ताक़त है जो गुनाह छोड़ने और हराम व बुराईयों की लत अपनाने के मज़े से अपने को बराबर रोके रखने की मशक़ से मिलता है। तक्वा अपना लेने और अपने को गुनाहों से बचाये रखने का हौसला पैदा करना बहुत बढ़िया क़दम और बड़ा प्यारा काम है। तक्वा अपनाना एक ऐसी इबादत है जो खुदा के हुक्म से की जाती है। इससे खुदा ज़रूर खुश होगा। बदन की, माल की और आचरण की व नैतिक (Moral) इबादत का फ़लसफ़ा आदमी की ज़िन्दगी में तक्वे को उभारना है। जिस इबादत से तक्वा पैदा न हो वह इबादत नहीं है। तक्वा बड़ाई की बुनियाद, शराफ़त की जड़, सफलता की गारण्टी और आख़िरती भलाई की कुन्जी है।

समाज हज़ारों घरानों से मिलकर बनता है। घराना मियाँ-बीवी और कुछ बच्चों से मिलकर बनता है। असल में घराने और समाज का आधार लोग ही होते हैं। अगर एक-एक आदमी

तक्वे वाला और संयमी बन जाये ता सही घराना और नेक समाज वजूद में आ जाये जिसके अन्दरूनी और बाहरी माहोल में अमन चैन का राज होगा। उसके लोगों की आदमियत पूरी होने के लिए मनचाही ज़मीन बराबर होगी। नतीजे में ऐसा समाज वजूद में आ जायेगा जिसका एक-एक आदमी एक-दूसरे का भला चाहने वाला होगा और सभी एक दूसरे को नुक़सान पहुँचाने से बचे रहेंगे।

तक्वे वालों से खुदा मुहब्बत करता है, नबी व इमाम उन्हें दोस्त रखते हैं और वही लोग भले, शरीफ़ उपयोगी और बड़े होते हैं। तक्वे वाले बड़े अच्छे किरदार के मालिक होते हैं। उनके चेहरे से खुदा का नूर टपकता है, वह बहुत अच्छे चलन, उत्तम आचरण और अच्छाइयों को अपनाते हैं और हर बुराई व गुनाह से अलग-थलग रहते हैं।

आदमी, ख़ानदान और समाज की इज़्ज़त खुदा के तक्वे में ही है। खुदा के नज़दीक तक्वे वालों से ज़्यादा कोई आदमी, घराना या समाज इज़्ज़त वाला नहीं है।

मियाँ बीवी को माँ-बाप औलाद को और समाज के दूसरे लोगों को आपस में जो एक-दूसरे से नुक़सान पहुँचते हैं वे तक्वा न होने की वजह

से पहुँचते हैं। घरों में और लोगों में एक-दूसरे से जो डर, वहशत रहती है वह भी तक्वा न होने के कारण है। लोगों की ज़िन्दगी से जुड़े मुद्दों में जो बेपनाह नुक़सान दिखायी देते हैं वह भी तक्वा न होने की वजह से होते हैं। वाक़ई एक आदर्श (Ideal) घराना बनाने के लिए मियाँ-बीवी पर वाजिब है कि वे खुद तक्वा अपनायें और यह भी ज़रूरी है कि वे तक्वे को अपनी नसलों (Generations) में पहुँचायें और शुरु से ही अपनी औलाद में तक्वा पैदा करने की कोशिश करें।

अच्छा होगा कि आप तक्वे के बेपनाह फ़ायदों को कुआन मजीद की आयतों और रिवायतों में देखें। फिर अन्दाज़ा लगायें और सोचें कि अगर सारे लड़के-लड़कियाँ तक्वे से सज-संवर जायें और फिर इस रूहानी पूँजी से शादी करें तो कितना अच्छा घर और समाज वजूद में आ जायगा।

तक्वा और उसके दर्जे

कुआन मजीद में जो लोग सूझ-बूझ रखते हैं और जिन्होंने रूहानी ऊँचाईयाँ पा ली हैं, वे तक्वे की तीन दर्जे श्रेणियाँ बताते हैं :-

- 1- ख़ासमख़ास तक्वा
- 2- ख़ास तक्वा
- 3- आम तक्वा

हज़रत इमाम जाफ़र सादिक (अ0) इन तीनों दर्जों को एक रिवायत में इस तरह साफ-साफ़ बयान करते हैं :-

“पहला दर्जा ‘बिल्लाह फील्लाह’ तक्वा (खुदा से खुदा के लिए खुदा में डर), यह हलाल

चीज़ों के इस्तेमाल न करने का नाम है, शक़ शुब्हे वाली चीज़ों की तो बात ही नहीं। दूसरा दर्जा ‘मिनल्लाह’ (खुदा से तक्वा) तक्वा है। यह हराम तो क्या शुब्हे वाली चीज़ों से बचने को कहते हैं। यह ख़ास तक्वा है। तीसरा दर्जा जहन्नम के और खुदा के दुखद व पीड़ा देने वाले अज़ाब (के डर) की वजह से पैदा होता है। यह सभी गुनाहों और हराम चीज़ों को छोड़ने का नाम है। इसको आम तक्वा कहते हैं।”

(मवाएज़े अददिया पेज-180)

साफ़ रहे कि इमाम जाफ़र सादिक (अ0) की हदीस में जो हलाल छोड़ने की बात आयी है उसका मतलब यह है कि ऐसा तक्वा रखने वाले बहुत सी हलाल चीज़ों के पीछे भी नहीं दौड़ते हैं क्योंकि वह उनकी ज़रूरत महसूस नहीं करते और उन्हें जिन हलाल चीज़ों की ज़रूरत होती है उनमें भी कम से कम काम लेकर राज़ी खुशी रहते हैं। हर आदमी इस तरह थोड़े पर राज़ी रह सकता है। अगर कोई यह कहे कि मुझमें यह करने की सकत नहीं है तो यह बात मानने के काबिल नहीं है। हलाल में भी थोड़े पर राज़ी-खुशी रहना और ज़िन्दगी की भौतिक (Material) चीज़ों को कम से कम इस्तेमाल में लाना, शान्दार मकान बनाने से बचना तथा महंगी सवारी ख़रीदने, भारी कीमत वाला कपड़ा बनाने और दस्तरख़ान या डाइनिंग टेबल (Dining Table) पर तरह-तरह के खाने चुनना, इन बातों से बचना एक नैतिक (Moral) ज़िम्मेदारी और चहीता काम है, इससे ज़िन्दगी की मामलों में खुदा का तक्वा पैदा होता है।

(जारी)

इदारा

मुख्य समाचार

इराक में शीओं पर हमले इस्लाम दुश्मन ताकतों की साजिश: मौलाना कल्बे जवाद साहब

लखनऊ। तारीखी आसफी मस्जिद में मौलाना सै0 कल्बे जवाद साहब ने अक़ीद-ए-आख़िरत और फलसफ-ए-आख़िरत पर रौशनी डाली और मुसलमानों के आलमी मसाएल से अवाम को बाख़बर कराते हुए कहा कि हमारा हकीकी घर जहाँ हमें हमेशा ज़िन्दगी गुज़ारना है उससे मुहब्बत करें। मौलाना ने कहा "जज़ा" इन्साना फितरत में शामिल है। उन्होंने कहा कि हर इंसान जो कोई इक़दाम करता है वह जज़ा का ख़्वाहिशमन्द होता है। यहाँ तक कि जो बन्दगाने खुदा दरपरदा दूसरों की मदद और अयादत व रियाज़त करते हैं वह भी जज़ा के तौर पर सवाब और पाकीज़गि-ए-रूह के चाहने वाले होते हैं।

मौलाना ने कहा कि कमयुनिज़्म की तहरीक की नाकामी का सबब यही था कि फितरत के तकाज़ों के ख़िलाफ़ आइन व क़वानीन तैयार किये गये, जज़ा चूँकि फितरत में शामिल है इसीलिए खुदा ने भी जज़ा और सज़ा को रखा है, क्योंकि अगर जज़ा और सज़ा और इनाम न रखा जाता तो इस दुनिया में ईमानदारी व दयानतदारी और हक़ पसन्दी की ज़िन्दगी कोई नहीं गुज़ारता इसलिए कि अरबाबे दुनिया ने बेईमानों को हमेशा नवाज़ा है और ईमानदारों व दयानतदारों को परेशान किया है।

मौलाना ने आलमे इस्लाम के हालात पर तब्सेरा करते हुए इराक़ में होने वाले दहशतगर्दाना हमलों पर तश्वीश का इज़हार करते हुए कहा कि यह इस्लाम दुश्मन ताकतों की सोची समझी साजिश है। दुश्मन पूरे ख़ित्तए अरब में मुसलमानों में इख़्तेलाफ़ पैदा करके आग लगा देना चाहता है। उन्होंने कहा कि अगर अमरीकी फौज़ मज़ालिम ढा रही है तो अमरीकी फौज़ियों पर हमले होने

चाहिए, बेकसूर शीओं पर हमले क्यों हो रहे हैं, उलमा ख़ामोश बैठे हैं और उनसे कहने पर वह फरमाते हैं कि वहाँ अमरीकी कठपुतली हुकूमत है। मौलाना ने आगे कहा कि मैं यह पूछना चाहता हूँ कि इसी तरह की हुकूमत तो अफ़ग़ानिस्तान में भी है फिर वहाँ की अवाम के साथ यह अमल क्यों नहीं दोहराया जा रहा है। उन्होंने कहा कि अलकाएदा और तालिबान इस्लाम के ख़िलाफ़ साजिश के तौर पर बनवायी गयी हैं, वहाँ के उलमा इस साजिश को समझते हैं वह अवाम को समझाए हुए हैं सब्र की तलकीन कर रहे हैं, क्योंकि अगर शीओं ने जवाब देना शुरू कर दिया तो पूरे अरब में शीआ सुन्नी इख़्तेलाफ़ात और मसलकी इख़्तेलाफ़ात शुरू हो जाएंगे और दुश्मन यही चाहता है। इराक़ में 70 फीसद अवाम शीआ होते हुए भी वह ख़ामोश हैं, वहाँ के शीओं के लिए बहुत सख़्त इम्तेहान की मंज़िल है। वह मर भी रहे हैं और जवाब भी नहीं दे रहे हैं।

मौलाना ने मज़म्मत करते हुए कहा कि हम दुआगो हैं कि मुसलमान दुश्मन की साजिशों को समझे और आपस में मुत्तहिद रहें। मौलाना कल्बे जवाद साहब ने ईरान पर होने वाले हमलों की ख़बरों के सिलसिले में तश्वीश का इज़हार करते हुए कहा कि इस वक़्त आलमे इस्लाम के लिए बहुत सख़्त इम्तेहान की मंज़िल है क्योंकि अगर ईरान पर हमला हुआ तो कोई इस्लामी मुल्क बचेगा नहीं। उन्होंने कहा कि मुसलमान हुक्मरानों से कोई उम्मीद नहीं है वह सब्र ऐश व इशरत में डूब कर गुलामी पर आमादा हैं जो इक़दाम भी करना है वह अवाम को करना है। खुतबे के आख़िर में मौलाना ने आलमे इस्लाम और मुसलमानों के तहफ़फ़ूज़ व सलामती के लिए दुआ करवायी।

क़र्बला-ए-मुअल्ला में हज़रत इमाम हुसैन (अ0) के हरमे मुतहहर की तज़ैय्युनकारी

क़र्बला-ए-मुअल्ला। हरमे मुक़द्दसे हज़रत इमाम हुसैन (अ0) के गुम्बदों की तलाई तज़ैय्युनकारी का काम मुहर्म्म से क़ब्ल मुकम्मल होने की ख़बर है। हरमे मुतहहरे सैय्यदुशशोहदा के मिनारों और गुम्बदों पर सोने के टाएल्स फिट किये जा रहे हैं।

इस प्रोजेक्ट की निगरानी सुप्रिम कमेटी की इज़ाज़त से शुरू की गयी है। इस पूरे काम की ज़िम्मेदारी एक हिन्दुस्तानी फर्म, अलफ़ैज़ुल हुसैनी एसोसिएशन को सौंपी गयी है। यह काम पूरी तरह से 12 महीनों में मुकम्मल होगा।

याद रहे कि दो साल क़ब्ल अमरीका और उसके इत्तेहादियों की बमबारी से इराक़ के कई मुक़द्दस मक़ामात को नुक़सान पहुँचा था और नई हुकूमत ने इस सिलसिले में कारवायी करते हुए उन मज़हबी मक़ामात की मरम्मत का बड़े पैमाने पर काम शुरू कराया है। मक़ामी शहरियों में इस तज़ैय्युनकारी से इन्तिहाई खुशी है और कुछ खुददाम तो इस काम में पेश-पेश हैं, और उन मज़दूरों और कारीगरों का साथ दे रहे हैं जो काम में लगे हुए हैं।

हज्जे बैतुल्लाह के मुबारक मौके पर

आयतुल्लाह सै० अली खामेना-ई मददजिल्लहू का खिताब

ईरान। हज के मुबारक व मसउद मौके पर ईरान के रहबरे मुअज़्जम हज़रत आयतुल्लाह सै० अली खामेना-ई ने मुसलमानों को खिताब करते हुए मक्क-ए-मुअज़्जमा में हाजियों के इत्तेमाअ को इन्सानी हमदर्दी के समन्दर से ताबीर किया। आपने फरमाया कि इन्सानों का जम्मेगुफ़ीर अल्लाह तआला की वहदानियत और तौहीद का सुबूत है। यहाँ पहुँच कर बन्दा खुदाए बरतर के नज़दीक होता है और इल्तेजा, आजिज़ी व इन्केसारी से दुआए ख़ैर माँगता है। खिताब के शुरु में आपने ईरान में हुए हालिया हवाई जहाज़ के अफसोसनाक हादसे पर रंज व गुम का इज़हार किया। हादसे में जाँबहक होने वाले जमहूरी इस्लामी ईरान के फरज़न्दान के लिए दुआए मग़फ़िरत की और उनके ख़ानदान व लवाहेकीन को सब्र की तलकीन की।

आप ने हज़रत इमाम खुमैनी के मिल्ली इल्तेहाद के नारे की अहमियत पर जोर देते हुए फरमाया कि इमाम खुमैनी ने पैग़म्बरों के हादियों, मुस्लेह और नेक बन्दों के

तौहीद के पैग़ाम और मसलकी हदबन्दी के ख़ात्मे पर ज़ोर दिया। हज बैतुल्लाह का खुसूसी पैग़ाम यही है कि हज़रत इब्राहीम (अ०) और उनके बाद पैग़म्बरों के बताए हुए तरीके से हज करें और हज के पैग़ाम पर अमल करें।

आपने इस बात पर ज़ोर दिया कि हाजी ख़ान-ए-काबा, मक्का और मदीना के पाक मुक़द्दस मक़ामात की अज़मत को पहचानें और पूरी रूहानियत के साथ हज के फ़राएज़ को अन्जाम दें। हज़रत आयतुल्लाह सै० अली खामेना-ई ने इस्लाम मिल्लत के मौजूदा हालत ज़ार का तज़क़िरा करते हुए इराक़ और फिलस्तीन पर अमरीका के ग़ासिबाना कब्ज़े की मज़म्मत करते हुए फरमाया कि अमरीका इराक़ में अमरीकी गर्वनर मुक़र्रर करके इराक़ पर हुकूमत करना चाहता है। उन्होंने इराकी अवाम पर ज़ोर दिया कि वह मसलकी इख़्तोलाफ़ात भुला कर आइन्दा इन्तेखाबात में ऐसे शख्स का इन्तेखाब करें जो ईमानदार, मुख़लिस और इराकी अवाम का वफ़ादार हो।

मौलाना कल्बे जवाद साहब हुसैनाबाद ट्रस्ट के नये सदर

ट्रस्ट का चार्ज, कमेटी को न सौंपने पर अवाम में नाराज़गी

लखनऊ। मौलाना कल्बे जवाद साहब ने ज़िला मजिस्ट्रेट की जानिब से हुसैनाबाद ट्रस्ट का चार्ज मुताल्लिका कमेटी को न सौंपे जाने पर नाराज़गी का इज़हार करते हुए इसे शीआ कौम के साथ ज़ियादती करार दिया है। उन्होंने इस मसले को कौम के लोगों के बीच ले जाने का एलान करते हुए कहा कि जुमा को नमाज़ के दौरान वह लोगों से इस सिलसिले में बात करेंगे। उन्होंने कहा कि जो भी राय कौम की तरफ से आएगी उसके मुताबिक़ हुसैनाबाद ट्रस्ट की ज़िम्मेदारी कौम को देने के सिलसिले में कारवायी की जाएगी।

मौलाना ने कहा कि गुज़श्ता चन्द बरसों से हुसैनाबाद ट्रस्ट की निगरानी का काम ज़िला मजिस्ट्रेट बतौर चेयरमैन सिर्फ़ इसलिए कर रहे थे कि ट्रस्ट का इन्तिज़ाम चलाने के लिए किसी कमेटी की तश्कील नहीं हो पा रही थी, मौजूदा शीआ वक्फ़ बोर्ड से पहले जो बोर्ड था उसकी जानिब से भी इस सिलसिले में कोशिश की गयी

थी लेकिन कुछ ख़ामियों की वजह से राएल फैमिली के एक मिम्बर की जानिब से इस कारवायी को अदालत से स्टे लेकर रुकवा दिया गया था, क्योंकि यह स्टे ख़त्म हो गया है और वक्फ़ बोर्ड ने नयी कमेटी की तश्कील कर दी है ज़िला मजिस्ट्रेट को हुसैनाबाद ट्रस्ट का चार्ज इस कमेटी को दे देना चाहिए। वाजेह रहे कि शीआ वक्फ़ बोर्ड की तरफ से बनी नयी कमेटी का चेयरमैन मौलाना कल्बे जवाद साहब को बनाया गया है। उन्होंने आगे कहा कि बोर्ड की इस कारवायी के बाद उन्होंने डी०एम० को एक ख़त भेज कर अपील की थी कि छोटे इमामबाड़े के ट्रस्टी रूम में आकर उन्हें ट्रस्ट का चार्ज दे दें। इसके लिए 23 जनवरी शाम चार बजे का वक़््त तैय हुआ था लेकिन न तो ज़िला मजिस्ट्रेट आए और न ही उनकी तरफ से कोई पैग़ाम आया जिससे शीआ कौम में बेहद नाराज़गी है। उन्होंने कहा कि चार्ज लेने के लिए बोर्ड की तरफ से कानूनी कारवायी भी की जाएगी।

इंसान को बेदार तो हो लेने दो
हर कौम पुकारेगी हमारे हैं हुसैन



हर प्रकार की होम्योपैथिक
दवाओं के लिए तशरीफ लाएँ
Nayyar Homeo Hall
नय्यर होम्यो हाल

होम्योपैथिक दवाख़ाना
पीपल चौराहा, निकट कांग्रेस भवन, बहराईच
फोन : 05252-235633

حرم الغفران ۱۴۲۵ھ

عمامہ شعاع

قَالَ اللَّهُ تَبَّ وَكَذَّبُوا عَنْ اللَّهِ الْفُزُورُ كِتَابٌ مُبِينٌ
وَكَلَّمَ اللَّهُ كُلَّ طَرَفٍ مِنْهُمْ لِيَأْتِيَ الْبُورُ وَكَانَ كِتَابٌ



مؤسسہ نور ہدایت حسینیہ غفران مآب لکھنؤ-۳

R.N.I. No. UPBIL/2004/13526 Postal Regd. No. SSP/LW/NP-75/2005-07

SHUA-E-AMAL

Lucknow

शुआ-ए-अमल

हिन्दी, उर्दू मासिक पत्रिका लखनऊ

ابن الطالب بدم

الفتول بکریلاء



NOOR-E-HIDAYAT FOUNDATION

Imambara Ghufuran Maab, Chowk LUCKNOW-3 (U.P.) INDIA, Phone : 2252230

वर्ष-2

R.N.I. No. UPBIL/2004/13526
Postal Regd No-SSP/LW/NP-75/2005-07

अंक 7-8

माह जनवरी-फरवरी - 2006 लखनऊ
नूर-ए-हिदायत फाउण्डेशन की
हिन्दी, उर्दू मासिक पत्रिका

मुहर्रम नम्बर
1427

शुआ-ए-अमल
“लखनऊ”

मुहर्रम नम्बर
1427

संरक्षक
मौलाना सै. कल्बे जवाद नक्वी साहिब
सम्पादक
सै. मुस्तफा हुसैन नक्वी 'असीफ' जायसी
उप-सम्पादक
हैदर अली

कार्यकारिणी बोर्ड
प्रोफेसर सै. हुसैन कमालुद्दीन अकबर, मु0 र0 आबिद,
सैय्यद समीउल हसन वसीम, शबीब अकबर नक्वी

वार्षिक - 200 रु

मिलने का पता

कीमत - 40 रु

नूर-ए-हिदायत फाउण्डेशन
इमामबाड़ा हज़रत गुफ़रानमआब मौलाना कल्बे हुसैन रोड
चौक लखनऊ - 3 (उ.प्र.) भारत फोन न0 0522-2252230

सै. कल्बे जवाद नक्वी प्रिन्टर, पब्लिशर और प्रोपराइटर ने मासिक शुआ-ए-अमल (उर्दू, हिन्दी) निज़ामी आफ़सेट प्रेस विक्टोरिया स्ट्रीट लखनऊ से छपवाकर आफ़िस नूर-ए-हिदायत फाउण्डेशन इमामबाड़ा गुफ़रानमआब मौलाना कल्बे हुसैन रोड लखनऊ-3 से प्रकाशित किया। सम्पादक : सै0 मुस्तफा हुसैन नक्वी 'असीफ जायसी'।

फ़ेहरिस्ते मज़ामीन

न०	मज़मून	लेखक	पेज न०
1-	जुलजनाह		
	आयतुल्लाहिलउज़मा सैय्यदुलउलमा सैय्यद अली नक़ी ताबासराह		3
2-	गरज़े शहादत		
	उमदतुल उलमा मौलाना सैय्यद कल्बे हुसैन नक़वी साहब ताबासराह		8
3-	दर्सगाहे कर्बला के चन्द सबक		
	आकाए शरीअत मौलाना सैय्यद कल्बे आबिद नक़वी साहब ताबासराह		12
4-	हुसैन अलैहिस्सलाम और हम		
	अल्लामा नज्म आफन्दी साहब ताबासराह		16
5-	सिजदा उस एक तेग़ तले का		
	फख़रे मिल्लत डाक्टर मौलाना सैय्यद कल्बे सादिक़ साहब किब्ला		19
6-	जवाज़े ताज़ियादारी		
	मौलाना सैय्यद कल्बे जवाद नक़वी साहब किब्ला मददज़िल्लहुश्शरीफ़		24
7-	जनाबे ज़ैनब का जुल्म-तोड़ जवाब		
	मु० र० आबिद		27
8-	ख़ानदाने इज्तेहाद और अज़ादारी		
	सैय्यद मुस्तफ़ा हुसैन नक़वी 'असीफ़' जाएसी		30
9-	मिसाली दोस्त हबीब (अ०) इब्ने मज़ाहिर		
	हैदर अली		34
10-	घर और समाज में खुदा का डर (तक़्वा)		
	हुज्जतुल इस्लाम हुसैन अन्सारियान		36
11-	मुख्य समाचार		
	इदारा		38

जुलजनाह

आयतुल्लाहिल उज़मा सैय्यदुल उलमा सैय्यद अली नकी ताबा सराह

जिस तरह आदम (अ०) की औलाद में खुदा ने ऐसे इन्सान पैदा किये जो अपनी क़ाबिले क़द्र खुसूसियतों के सबब से दुनिया में हमेशा-हमेशा के लिए अपना नाम छोड़ जाँ इसी तरह आलमे काएनात में दूसरी किस्म की चीज़ों के अन्दर भी ऐसे-ऐसे नमूने पैदा किये हैं जिनके आला सिफात उस जिन्स के लिए फ़ख़ व नाज़ का सबब बन सकें।

क़दरदानी हर चीज़ की उसके लिहाज़ से होना चाहिए। हर पिछली चीज़ जिससे ऐसे वाक़ेआत का ताल्लुक़ हो जो आइन्दा नसले इन्सानी के लिए सबक़ देने वाले हों वह उसकी हक़दार है कि उसकी याद हमेशा ताज़ा रखी जाए।

क़द्र के क़ाबिल सिफ़त हर शै में क़द्र के क़ाबिल है उसमें किसी मज़हब व मिल्लत का फ़र्क़ नहीं है। एक दरयादिल साहबे ज़ूद व सख़ा इन्सान अपनी खुसूसी सिफ़त के बाअिस हर इन्सान की मुहब्बत का सबब है। एक सच्चाई पर जान देने वाला जिगर वाला शख्स हर इन्सान की अक़ीदत का मरकज़ होता है। एक नेक दिल, खुश अख़लाक़ आदमी की हर एक तारीफ़ करेगा। यह तमाम इन्सानी सिफ़तें हैं जिनकी क़द्र करने वाला हर इन्सान होता है। यह चीज़ें मज़हब व मिल्लत के तफ़रक़े से बिलकुल अलग हैं।

इसी तरह ग़ैर इन्सानी जानदार मख़लूक़ में इम्तियाज़ी सिफ़ात हर शख्स के ध्यान का बाअिस हो सकते हैं। मुहज़ज़ब और मुतमदिदन

जमातें यादगार कायम करती हैं और याद ताज़ा भी रखती हैं। इन जानवरों की भी जो किसी अहम वाक़ेए में कोई नुमाय़ाँ हैसियत रखते हों।

आगरा के शाही क़िले के बाहर सय्याह को घोड़े का मुजस्समा ज़रूर नज़र आएगा। सीने तक ज़मीन के अन्दर और सिर्फ़ सर व गर्दन उसकी बाहर दिखती है। इसको जुस्तजू ज़रूर दरयाप्त करने पर मजबूर करेगी। "यह घोड़ा कैसा है?" इसे मालूम होगा कि यह घोड़ा एक बहादुर शेरदिल इन्सान को क़िले की ऊपरी दीवार से लेकर फाँदा था और सीने तक रेंग में धंस गया था।

इससे इन्सानी हिम्मत पर क्या असर पड़ता है? इन्सान के दिल पर कौन सा नक्श काएम होता है? इन्सान को क्या सबक़ हासिल होता है? बहरहाल ऐसा ही कुछ था जिसे बतौर यादगार मुजस्समे की सूरत में काएम रखने की ज़रूरत महसूस की गयी।

कम से कम खुद इन्सान की पहचान की क़द्र साबित होगी कि वह जानवर की भी क़द्र करता है। अगर उससे कोई नुमाय़ाँ वाक़ेआ सामने आ जाए।

अख़बार पढ़ने वाला तबक़ा बेख़बर न होगा उन वाक़ेआत से जो रोज़ाना दूसरे मुल्कों में होते रहते हैं, जहाँ मालूम होता है कि हैवान भी क़द्र के क़ाबिल हो सकता है और इन्सान की इन्सानियत इस क़द्र को जानने पर मजबूर हो जाती है।

हैवानी नस्ल में ऐसी मख्लूक की कमी नहीं है जो अपनी जिन्स के एतबार से बुलन्द सिफतों की हामिल हो, एक कुत्ता जो हैरतअंगेज वफादारी का इज़हार करता है इस काबिल समझा जाता है कि उसके मरने पर इज़हारे ग़म व अलम के लिए हज़ारों रुपये खर्च कर दिये जाएँ, जलसे हों और इज़हारे रंज किया जाए। जापान के मुल्क का यह वाक़ेआ अभी कुछ ज़्यादा दूर नहीं हुआ है।

मज़हबी रिवायात में अस्हाबे कहफ के कुत्ते का ज़िक्र कुआने मजीद तक में मौजूद है और वह भी उन्हीं खुसूसियतों में शरीक किया गया जो अस्हाबे कहफ के लिए हासिल हैं वह जदीद दुनिया की जदीद तहज़ीब का कारनामा था और यह क़दीम तारीख़ का क़दीम वरक़।

एक मुद्दत तक ईसाइयों की गिरजाओं में उस सुम की ताज़ीम हुई है जो हज़रत ईसा की सवारी के हैवान का उनके यहाँ समझा जाता था।

इस्लाम में उस दुम्बे की यादगार का़ेम की गयी जो हज़रत इब्राहीम (अ0) के पास उनके फ़र्ज़न्द इस्माईल (अ0) के फ़िदये की कुर्बानी के लिए आया था और हमेशा-हमेशा के लिए बक़रईद में कुर्बानी का हुक्म देकर उसकी शबीह बनाने का क़ानून जारी कर दिया गया।

मुसलमानों की बड़ी तादाद ने उस ऊँट और महमल की यादगार का़ेम की जिस पर उम्मुलमोमिनीन हज़रत आएशा सवार हुई थीं और वह अब तक मिस्र से जो अरबी तहज़ीब व तमद्दुन का गहवारा बना हुआ है वह महमल मक्क-ए-मोअज़्ज़मा भेजी जाती रही है।

हिन्दू कौम तो बराबर जानवरों की क़द्र जानने वाली रही है, वह हर उस जानवर को

जिससे नौए इन्सानी को फाएदे पहुँचें हैं, क़द्र की निगाह से उस हद तक देखती है जिसे इबादत की हद तक समझा जा सकता है।

अगरचे इबादत अल्लाह के अलावा की जाएज़ नहीं है मगर इन्सान को पिछले वाक़ेआत की याद ताज़ा रखने के लिए ज़रूरत है कि वह उन तमाम चीज़ों की याद बाक़ी रखे जिनके साथ उन वाक़ेआत का ताल्लुक़ है।

ईसाईयों ने ग़ैर जानदार चीज़ वह सूली जिस पर हज़रत यसूअ मसीह (अ0) को उनके ख़याल में चढ़ाया गया है आज तक सलीब की शक्ल में का़ेम रखी है जो हर गिरजाघर में मौजूद रहती है और हर ईसाई की गर्दन में लटकी रहती है।

इस्लामी रिवायात में हज़रत इब्राहीम (अ0) के खड़े होने की जगह (मक़ामे इब्राहीम अ0) मुसल्ला क़रार दिया गया कि वहाँ लोग नमाज़ पढ़ें, वह पानी का चश्मा जो इस्माईल (अ0) के प्यास से परेशान होने की हालत में सामने आया था चाहे ज़मज़म के नाम से इन्तिहाई बरकत वाला क़रार दिया गया। कोहे सफ़ा और मरवह को जहाँ हज़रत हाजरा पानी की तलाश में परेशान फ़िरीं थीं, दौड़ने की जगह बना दिया गया। इसके माने यह हैं कि अरक़ाने हज में शबीहें का़ेम की गयीं, उन पिछले वाक़ेआत की जो अहम हस्तियों से ताल्लुक़ रखते हैं।

वह वाक़ेआत ज़िन्दा रखने के काबिल हैं जो नस्ले इन्सानी के लिए अच्छे-अच्छे सबक़ देते हों, जो दिल में रहम व करम का शौक़ पैदा करते हों, जो वफादारी और नेक शेआरी की क़द्र बतलाते हों।

यह वाक़ेआत वह होते हैं जो अगरचे

किसी खास कौम या जमात ही में वाक़े हुए हों लेकिन उनका फाएदा और नतीजा तमाम नस्ले इन्सानी के साथ एक ही हैसियत से ताल्लुक रखता है। इसलिए इनमें हरगिज़ कोई तफरीक नहीं होनी चाहिए। वह हरगिज़ फिरका वाराना हैसियत नहीं रखते और न फिरकाबन्दी का बाअिस होते हैं। अगर उन्हें फिरका बन्दी के तौर पर अदा किया जाए तो यह किसी खास जमात की गुलती होगी जिससे खुद वाक़े के फाएदे की हैसियत और हमागीरी को नुक़सान पहुँचेगा इसलिए खुद वाक़ेआ उस तर्ज़अमल का शक करने वाला होगा।

क़र्बला का अहम वाक़ेआ जो 61 हिजरी में दसवीं मोहर्रम को पेश आया वह अगरचे मज़हबी रिवायात के एतबार से एक खास जमात यानी मुसलमानों के साथ ताल्लुक रखता है लेकिन हकीकत में वह अपने नतीजे के एतबार से तमाम दुनिया की तारीख़ का एक अहम सबक़ लेने वाला सहीफा है। वहाँ तमाम इन्सानी सिफ़तें व फ़ज़ीलतें अमली तौर पर पेश की गयीं थीं, वहाँ रहमो करम, अख़लाक़ व मुरव्वत, सिबाते क़दम और इस्तेक़लाल, तहम्मुल व ज़ब्तो नफ़्स, ईसार व हमदर्दी, हक़ परवरी और हकीकत कोशी, यह सब और इनके अलावा तमाम इन्सानी मुकम्मल सिफ़ात थे जो मुजस्सम तौर पर सामने लाए गये।

इसलिए हरगिज़ क़र्बला के वाक़े की यादगार कायम करने और उस वाक़े से सही सबक़ हासिल करने के तन्हा मुसलमान हक़दार नहीं हैं बल्कि पूरी इन्सानियत इस वाक़े के अहम नुकात और तालीमात से बहरामन्द होने का मौक़ा रखती है।

हुसैन (अ0) की ज़ात दुनिया के लिए नुक़त-ए-इत्तेहाद है। हुसैन (अ0) की ज़ात ही

आलम के लिए मरकज़े इज्तेमाअ है। हुसैन (अ0) की ज़ात तमाम दुनियाए इन्सानियत के लिए पैग़ामे हयात है। हुसैन (अ0) की ज़ात तमाम नसले बशरी के लिए सामाने नजात है।

दुनिया हज़ारों मसलों में इख़्तेलाफ़ रखे, आपस में दस्तो गिरेबाँ हो मगर जब शहीदे क़र्बला हुसैन (अ0) की हस्ती सामने आएगी तो यहाँ आकर तमाम फ़र्क़ दूर हो जाएँगे, यहाँ किसी इख़्तिलाफ़ की गुन्जाइश न होगी। किसी मज़हब का मानने वाला हो, किसी मिल्लत का पैरो हो मज़हब से काम नहीं बिलकुल ला मज़हब इन्सान हो, तबअी हो, नेचरी हो, दहरी हो जो भी हो लेकिन अगर सीने में दिल और दिल में एहसास रखता है तो वाक़े-ए-क़र्बला से मुतास्सिर हुए बग़ैर नहीं रह सकता है।

मैं सच कहता हूँ कि हुसैन (अ0) की ज़ात तमाम इख़्तिलाफ़ात से ऊपर है। शीओं को यह हक़ नहीं है कि वह यह कहें कि हुसैन (अ0) सिर्फ़ हमारे हैं। मुसलमानों को यह हक़ नहीं कि वह यह कहें कि हुसैन (अ0) सिर्फ़ हमारे हैं। हकीकत में हुसैन (अ0) तमाम इन्सानी दुनिया के हैं। उन्होंने वह काम किया है जिसने मिटती हुई इन्सानियत के निशानों को उभार दिया। जिसने दम तोड़ती हुई इन्सानियत को नए सिरे से ज़िन्दा कर दिया, जिसने इन्सानियत की डूबती हुई कश्ती को साहिले मुराद तक पहुँचा दिया। उन्होंने अपनी जान देकर हमेशा-हमेशा के लिए वह नमूना काएम कर दिया जिसकी पैरवी हमेशा के लिए मेयारे इन्सानियत रहेगी।

यकीनन ऐसे अहम वाक़ेआत की यादगार काएम करना हर उस सूरत से जो उस वाक़े की याद बाक़ी रखने में फाएदे वाली साबित हो सके

एक अहम इन्सानी फ़र्ज है।

कर्बला में जिस तरह हुसैन इब्ने अली (अ0) के साथी इन्सानों ने वह कारे नुमायाँ किए जिनकी मिसाल सफह-ए-तारीख़ पर नहीं मिल सकती। इसी तरह दूसरे जीरुह यानी जानवर को भी यह फ़ख़ है कि उसने एख़लास व वफ़ा का ऐसा नमूना पेश किया जो तारीख़ में यादगार रहेगा।

वह हुसैन का घोड़ा जो "जुलजनाह" के नाम से मौसूम था उसने अपने मालिक का साथ उस आख़री वक़्त तक दिया जबकि कोई मुआन व मददगार, कोई ख़बर लेने वाला और ख़बर पहुँचाने वाला बाकी न था किसे नहीं मालूम कि कर्बला में फ़र्जन्दे रसूल (स0) के लिए पानी का क़हत हो गया था। भला कौन कह सकता है कि छोटे बच्चों के लिए जिसमें अली असग़र का सा दूध पीता बच्चा भी हो, लब तर करने के लिए पानी न मौजूद हो तो घोड़े पानी से सैराब किये जा सकते होंगे?

हरगिज़ नहीं, अगर बच्चों के लिए सबसे आख़री क़तरा पीने के लिए पानी का सर्फ़ हो सकता है तो घोड़े उसके पहले से प्यासे होंगे इसके बाद सुब्ह से सेपहर के वक़्त तक बराबर सैय्यदुश्शोहदा को अरब की तेज़ धूप, गर्म हवा में खेमागाह से मैदाने जंग तक (जो काफी दूर था) आना और जाना, हर अज़ीज़ की रुख़सत के वक़्त खेमे के पास होना और जाँकनी के वक़्त मैदाने जंग में उसके सरहाने। यह तमाम आमद व रफ़्त घोड़े की पुश्त पर होती थी, फिर हमले, लड़ाई और वह क़यामतख़ेज़ लड़ाई जिसकी मिसाल तारीख़ में नहीं है।

सबसे पहले आगाज़े जंग तीरों की बारिश

ही से हुआ था, इसके बाद ज़ोहर से घण्टा ढेढ़ घण्टा पहले जब तमाम यज़ीदी फौज ने एकसाथ तीरों की बारिश की है और हज़ारों तीरों की बाढ़ें एक साथ चली हैं तो तारीख़ गवाह है कि उसकी सबसे बड़ी ज़द घोड़ों ही पर हुई थी चुनानचे फौजे हुसैनी के ज़्यादा घोड़े उसमें पै हो गये और अक्सर सवार पैदल हो गये। कौन कह सकता है कि उस वक़्त जुलजनाह को कोई ज़ख़्म नहीं आया। वह वक़्त जबकि हज़ारों की फौज के सैलाब में एक तन्हा हुसैन (अ0) डूबते थे और दुश्मनों को मुन्तशिर करके बाहर आते थे, नेज़ों के हमले भी थे और तलवारें भी, तीर भी थे और तबर भी उस वक़्त क्या घोड़ा हुसैन (अ0) का महफूज़ था? और क्या दुश्मनों के घबराए हुए हरबे जो बेताबी के आलम में पड़ते थे वह मरकब को साफ बचा ले जाते थे?

जंग का वाकिफ़कार यकीन के साथ कह सकता है कि इस अज़ीमुश्शान जंग में एक घोड़ा हुसैन (अ0) का एक बहादुर जाँनिसार और एक वफ़ाशिआर मुआन व मददगार का काम अन्जाम दे रहा था वह यकीनन दुश्मनों को ज़द पर लाता था, वार ख़ाली करता था और गिरे हुए दुश्मन को रौंदता भी था और शिकस्ता भी करता था।

इस गेरुदार, इस जंग जिदाल, इस हंगाम-ए-क़िताल में घोड़े की प्यास, उसके सीने का इल्तेहाब, उसके जिगर की सोज़िश, उसके एहसास से ताल्लुक़ रखती है मगर वह वक़्त यादगार है कि जब फौज से मैदान साफ हुआ, फुरात का दामन बिलकुल ख़ाली हो गया, हुसैन (अ0) नहर के करीब आए, घोड़ा अपना नहर में डाल दिया और यह कहा या अपने तर्ज़े अमल से साबित किया कि "ऐ मेरे बावफ़ा! तू बहुत प्यासा होगा यह पानी मौजूद है अपनी प्यास बुझा ले।"

उस वक़्त कोई नहीं, फुरात की मौजें गवाही देंगी, साहिले फुरात शहादत देगा कि घोड़े ने अपनी गर्दन उठा ली थी, अपना सर बुलन्द कर लिया था, अपना मुँह बन्द कर लिया था। मतलब यह था कि मैं हरगिज़ पानी नहीं पियूँगा, जब तक आप इस पानी से सैराब न होंगे। हुसैन नहर से बाहर निकल आए और घोड़ा भी प्यासा निकला।

अब वह वक़्त आया जब घोड़े की तमाम कोशिशें जंग ख़त्म हो चुकी, जब उसकी पुश्त उसके राकिब से ख़ाली हो गयी। जब उसके मालिक को चारों तरफ से खूँआशाम दुश्मनों ने घेर लिया, उस वक़्त उसके लिए हुसैन (अ0) की सबसे बड़ी ख़िदमत का वक़्त आया, उस वक़्त उसने वह काम अन्जाम दिया जो उसके लिए मख़सूस हो गया।

उसने एहसास किया कि अब मुदाफ़ेअत का कोई मौक़ा बाकी नहीं है, जंग का मैदान दुश्मनों से भरा है और यहाँ कोई दोस्त नहीं है, वह अभी जॉनिसारी व जॉफ़रोशी कर रहा था, जिहाद के रास्ते में हुसैन (अ0) का साथ दे रहा था, लेकिन अब जबकि उसका सवार अपनी मन्ज़िल तक पहुँच गया, जबकि रास्ते की मुसाफ़त ख़त्म हो चुकी, जबकि सवारी को कोई सवाल बाकी नहीं है तो उसने खुद अपने उस फर्ज़ का एहसास किया कि

वह बेकस व बेबस औरतों को जो खेमों में अपने वाली व वारिस की ख़बर की मुन्तज़िर थीं जाकर अपने मालिक की ख़बर पहुँचा दे।

उसने अपनी पेशानी खून में तर की, वह सीधा खेम-ए-हुसैन (अ0) के दरवाज़े पर पहुँचा, उसने हिनहिना कर अपनी आवाज़ अन्दर पहुँचाई। मुन्तज़िर सैय्यदानियाँ उसकी आवाज़ को सुनते ही दरवाज़े पर आ गयीं वह देखा जो पहले कभी न देखा था, उसका ख़ाली जेन, उसकी रंगीन पेशानी, उसकी कटी हुई बागें, उसका ज़ख्मी जिस्म, उसके जिस्म में पेवस्त तीर वह सब कुछ कह रहे थे जिसकी ख़बर देने वह दरवाज़े पर आया था।

यह थी वह आख़री ख़िदमत जो जुलजनाह ने अन्जाम दी, और यह है वह यादगार वाक़ेआ जो इस यादगार जानवर के साथ ताल्लुक रखता है। यही वह यादगार है जो हुसैन इब्ने अली (अ0) की अज़ादारी के सिलसिले में "जुलजनाह" की शबीह निकाल कर काएम की जाती है।

"जुलजनाह" ज़िन्दा है जब तक हुसैन (अ0) का नाम ज़िन्दा है। अपने सवार की बदौलत भी हमेशा ज़िन्दा रहेगा और उसकी यादगार हमेशा काएम रहेगी।

□□□

अक़वाले सैय्यदुश्शोहदा अलैहिस्सलाम

- ☐ किसी इमारत में हराम चीज़ों का इस्तेमाल न करो कि वह वीरानी का बाअिस है।
- ☐ जो तुम्हारा दोस्त होगा वह तुम्हें बुरे कामों से बचाएगा।
- ☐ इंसान की इज़ज़त इसमें है कि वह दूसरों का मोहताज न रहे।

गरजे शहादत

उमदतुल उलमा मौलाना सैय्यद कल्बे हुसैन नकवी साहब ताब सराह

जब हिजरी सन् बदलता है, जब माहे जिलहिज्जह की आखरी तारीख में खंजरे ग़म बनकर नया चाँद मोहरम की पहली रात में आसमान पर चमकता है, जब हर सच्चे शीआ के घर में मातम की सफ बिछती है, ग़म का लिबास जिस्म पर होता है, हर मर्द औरत पूरी तरह से ग़म की निशानी बन कर अहलेबैते रसूल (स0) की मुहब्बत का मुज़ाहेरा करता है। जन्नत के फिदायी असहाबे हुसैन की तरह मज़लूम पर जान फिदा करने की तमन्ना में बेचैन होने वाले कहीं अलमदारे लश्करे हुसैन की यादगार में अलम नसब करते हैं कहीं जियातरते क़ब्रे हुसैन के मुश्ताक़, बाँस, काग़ज़, लकड़ी या चाँदी सोने से शबीहे रौज़ा शहीदे कर्बला बना के असल से दूर रह कर भी शबीह को देख कर सवाबे ज़ियारत हासिल करते हैं।

ज़िक्रे हुसैन को हर उस अन्दाज़ में दुनिया के सामने पेश करने की कोशिश करते हैं जो दिलनशीन और नज़रों में समाने वाला हो। दुनिया के हर उस इंसान के लिए जज़्बात को भड़काने वाला हो, जिसके दिल के किसी गोशे में मज़लूम से हमदर्दी की लहरें छुपी हों।

इनही फिक्रों का इज़हार कहीं रौज़ाख़्वानी कहीं किताब ख़्वानी, कहीं वाक़ेआ ख़्वानी और कहीं नस्र ख़्वानी, मरसिया और ग़म की सूरत में ज़ाहिर होता है और अब आख़िर में नसीहत के नाम से बुलन्दी की आख़री मन्ज़िल तक पहुँचता है। मज़क़ूर बाला बहुत से अन्दाज़ वह हैं जो अब

छूटे हुए हैं और शायद सैकड़ों आदमियों को मालूम भी न होगा कि मज्लिसे ग़म में उनके पेश करने का तरीका क्या था अपनी मालूमात की हद तक मैं यह कहने की ज़ुराअत कर सकता हूँ कि नसीहत का अन्दाज़ आम होने से पहले हर ज़ाकरी का अन्दाज़ सिर्फ़ फ़ज़ाएल व मसाएबे मासूमीन (अ0) तक मुनहसिर था जिसमें मुनाज़रा की नमकीनी सुनने का शौक बढ़ाने के लिए लाज़मी समझी जाती थी।

मगर तक़रीबन एक सदी के अन्दर-अन्दर जब से नसीहत धीरे-धीरे ज़ाकरी के मुख़्तलिफ़ तरज़े नज़र करने लगा, उस वक़्त से मुख़्तलिफ़ मौजू हाज़रीने मजलिस की समाअत तक पहुँचने लगे। (मगर कमी के साथ) ज़ियादती ऐसे ही मज़ामीन, लफ़्ज़ी रिआयात, ख़िताबात, शाएराना नुकात की थी और है। जो सलवात के लरज़ते नारों से वाइज़ के कलाम को आम पसन्द होने की सनद दे दें। वाह-वाह के लालच में सुनने वालों को यह भी समझा दिया जाता है कि सिर्फ़ मुहब्बते आले मोहम्मद (स0) नजात के लिए काफी है। यह भी कह दिया जाता है कि ग़म का एक आँसू तमाम जहन्नम की आग को बुझा देगा।

एक मातम की मज्लिस में बैठ जाना जन्नत का मुस्तहक़ बना देगा मगर यह नहीं बताया जाता कि "बिशरतिहा व शुरुतिहा" यह चीज़ें सिर्फ़ उसी वक़्त जन्नत का परवाना बनती हैं जब इनके साथ ईमान हो, वहदत हो, रिसालत, इमामत, मआद, खुदा की अदालत और तमाम

उसूले दीन के सच्चे दिल से इकरार के साथ। फुरुए दीन, नमाज़, रोज़ा, हज व ज़कात, खुम्स और हराम व हलाल के अहकाम पर भी अमल हो। नमाज़ के वास्ते सुन्नी व शीआ का इत्तेफाक है कि अगर यह इबादत कबूल न होगी तो हर अच्छा काम रद्द हो जायेगा। रोज़े के वास्ते यह अहमियत है कि मोमिन हो, बड़े से बड़ा अज़ादारे हुसैन (अ0) हो, लेकिन माहे रमज़ान में तीस दिन बिना किसी शरअी उज़र शरअी हाकिम की तम्बीह के बाद भी रोज़ा न रखे तो अगर हुक्मते शरअी पर सरकार हो तो उस मोमिन को क़त्ल कर दो। हज जिस पर वाजिब हो और वह इमकान के बाद भी हज न करे तो वह आख़िर वक़्त यहूदी काफ़िर होकर मरेगा। ज़कात मोमिन का हक़ है जो ज़कात अदा न करे उसको खुदा हरगिज़ माफ़ न करेगा, जब तक वह मोमिन माफ़ न करें जिनका हक़ उसने अदा नहीं किया।

खुम्स सादात और इमाम (अ0) का हक़ है और यकीनन वाजिब होने के बाद अपने ही माल में हेर-फेर करने वाले भी ग़ासिबे हक्के सादात और ग़ासिबे हक्के इमाम हैं। जिसके माफ़ करने से अइम्मा ने इनकार फरमा दिया है। जो चीज़ें शरअ ने हराम की हैं उनमें कुछ ऐसी भी हैं जिनके लिए कुर्आन ने खुली दलील दी है कि अगर कोई उनका इरतेकाब करे तो चाहे वह मोमिन हो, चाहे वह मुस्लिम है, अहलेबैत का दोस्त हो या अज़ादारे हुसैन (अ0) मगर उसका बदला जहन्नम के सिवा कुछ और नहीं हो सकता। जैसे क़त्ले मोमिन, पाकदामन के साथ ज़िना करने की सज़ा यह है कि संगसार करके मार डाला जाए।

“और इन्हीं सब चीज़ों की तालीम गर्जे

शहादते हुसैन (अ0) थी।”

अगर हमारे सैय्यद व सरदार (अ0) की शहादत सिर्फ़ इस गर्ज से होती कि रोने वाला कोई भी हो सीधा जन्नत में जाए। मजलिसे हुसैन में बैठने वाला किसी मज़हब का पाबन्द हो मगर वह नजात का मुस्तहक़ है। अहलेबैत (अ0) का दोस्त चाहे जैसा भी बदकार और इबादात को छोड़ने वाला हो मगर वह नजात पाने वाला है, तो यह कहना बिल्कुल ग़लत है कि इमामे हुसैन (अ0) ने अपने नाना का दीन बचाने के लिए कर्बला की अक्ल को हैरान करने वाली फिदाकारी दुनिया के सामने पेश की। नाना ने वहदत, रिसालत, मआद, सिफाते इलाही, नमाज़, रोज़ा, हज वगैरा हर चीज़ की तालीम दी और बगैर इस इल्म व अमल के जन्नत भी मिल जाना मुश्किल बता दिया मगर इमाम हुसैन (अ0) ने मआज़ल्लाह नसरानियों के अक़ीदे की तरह उम्मत के गुनाहों का फिदया बनकर उम्मत को आम इजाज़त दे दी कि कोई अमले ख़ैर न करना, किसी बुराई से न बचना, बस सिर्फ़ मेरी अज़ादारी करना और जन्नत तुम्हारी है।

नहीं खुदा की क़सम हरगिज़ इमामे हुसैन (अ0) की यह तालीम नहीं थी। उनकी शहादत की गर्ज सिर्फ़ हिफाज़ते इस्लाम थी, तालीमाते रसूल (स0) को बाकी रखना था, लोगों को गुमराही से बचाकर उसूल व फुरु के सही रास्तों पर लगाना गर्जे हकीकी थी।

एक ज़माने में इस हिन्दुस्तान में जो कभी जन्नत निशान कहा जाता था, और अब जहन्नम की तस्वीर है। जहाँ इक्तेसादी तकलीफों, लूट-मार, आम लोगों की बदअख़्लाक़ियों, क़ानून की ख़िलाफ़वर्जियों, हुक्काम की नाइंसाफ़ियों, हुक्मत

की गुफ़लतों और बदइन्तिज़ामियों की कड़वाहट, महंगायी की शिद्दत, डकैती, क़त्ल व ग़ारतगरी, इन्सानि ख़ून की बेक़द्री और फिर फिरका परस्त जमातों की तबलीगी कोशिशों ने हर इंसान की ज़िन्दगी मौत से बदतर बना दी है। अगर हम अपने मज़हब को बचा सकते हैं तो सिर्फ़ अज़ादारी की बदौलत मगर न इस सूरत से कि नौहे को नौहे की हद से निकाल कर मदह की नज़्म बना दें, और उस पर मातम करें मिसरा यह हो कि अली (अ0) ने ख़ैबर फतह कर लिया और हम उस पर मातम कर रहे हैं। न इस सूरत से हम सिर्फ़ चाँद के दो टुकड़े होने और सूरज के वापस लौट आने में बारीकियाँ देखें न इस सूरत से कि सोज़ख़ानी में बड़े-बड़े गवय्यों को मात कर दें। न इस सूरत से कि मिम्बर को तबरी बाज़ी से भरकर खुद अपने ही अफ़राद को मज्लिस से उठ जाने पर मजबूर कर दें बल्कि अगर इस दौर में इस्लाम को बचा सकते हैं तो सिर्फ़ यह बताकर कि हुसैन (अ0) वहदत के कितने ज़बरदस्त मोतकिद थे, शहादत की मन्ज़िलों की वह अज़ीमुशशान सख़्तियाँ जिनको दुनिया का कोई इंसान बर्दाश्त न कर सका सिर्फ़ इस जज़्बे में तय कर गये कि मेरे ख़ालिफ़ का यही हुक्म है, हर वह मुसीबत जो इंसान के तहम्मूल से बाहर थी बड़ी हंसी खुशी से सिर्फ़ इसलिए उठा ली कि मेरा अल्लाह इसमें राज़ी है रसूल की सदाक़त का सुबूत इमामे हुसैन (अ0) ने हर उस इबादत को कर्बला में अदा करके दिया जिनकी तालीम ख़ातमुन्नबिय़ीन (स0) ने दी थी। और जिसको इस मज़लूम और दूसरे मासूमीन (अ0) के अलावा कोई कर्बला के हालात में अदा न कर सका, यानी वाजिबात तो वाजिबात मुसतहब्बात भी तर्क न

किये जिनका तज़किरा इशारों किनायों में कर देने से कुछ हज़रात ग़ाली शीओं की नज़रों में काबिले लान-तान हो गये। मज़हबी मामलों में यक़जहती, इत्तेहाद, खुलूस, नीयत, सब्र, जन्नत व नार, हिसाब व किताब, सवाब व सज़ा, हर चीज़ में यकीन व ईमान की वह मन्ज़िल इमामे हुसैन (अ0) व अस्हाबे हुसैन (अ0) ने पेश की जिससे ज़्यादा मुस्तहक़म ईमान किसी आम इंसान में होना नामुमकिन है।

आज हिन्दुस्तान में यकीनन हमारी जान व माल इतने ख़तरे में नहीं है जितना ईमान ख़तरे में है। इस वजह से कि हुकूमत का मसलक लादीनी है तो रिआया में भी ला मज़हबियत का असर आना ज़रूरी है और इस वजह से कि हुकूमत का मसलक ला दीनी सही मगर कभी-कभी अरकाने हुकूमत किसी न किसी मज़हब के जज़्बात से यकीनन मुतास्सिर हैं। जिनका इज़हार कभी न कभी और किसी न किसी अन्दाज़ में हो जाना नागुज़ीर है और इसलिए कि एक तरफ़ बहाई मिशन दूसरी तरफ़ शुद्धी के फ़िदायी मज़हब बदलवा देने पर तैयार हैं। और उसमें ज़रा सा भी झूठ नहीं कि गुड़गाँव के इलाके में बंगाल के दूर-दराज़ देहात में सूबे मुम्बई वगैरा के गाँवों में बहुत से मुसलमान अपना दीन बदल चुके हैं। और इसलिए कि नाम के मुसलमान और सिर्फ़ ख़ानदानी शीआ यूँ औरतों की तालीम के फ़िदाई बन गये हैं कि उनको न ज़िनाकारी आम हो जाने की शर्म है, न बेपर्दगी की ग़ैरत है। न इग़्वा के आम वाक़ेआत देखकर आँख खुलती है, न औरतों के दूसरे मज़हबों के साथ सिविल मैरेज कर लेने से कान पर जूँ रेंगती है, बिलकुल सच है..... "अलहया मअल ईमान" (अगर ईमान हो तो शर्म

व हया भी होती है) अगर ईमान नहीं तो शर्म व हया का खुदा हाफिज़, इस काएदे के मुताबिक यह कहना नागुज़ीर है कि जो बेहयाई बर्दाश्त करने पर खुशी-खुशी तैयार हैं उनका ईमान यकीनन कमज़ोर है। आप याद रखें कि बच्चों की शुरुआती और घरेलू तरबियत व तालीम बहुत ज़ाएद हमारी औरतों की एहसानमन्द है। और इस वजह से यह कौल मशहूर है कि ईमानदारी का ज़्यादा बाकी रहना औरतों ही के दम से है, इसलिए अगर औरतें ही दुनियावी तालीम हासिल करके दूसरे मज़ाहिब से सिविल मैरेज करके ईमान व इस्लाम से बाहर हो जाएँगी। तो बड़ी हद तक ईमान और उसके साथ अज़ादारी भी ख़त्म हो जाएगी, इसलिए इस ज़माने में अज़ादारी-ए-इमामे हुसैन (अ0) में वह अन्दाज़ इस्तिथार किये जाना लाज़िम हैं जिनसे ग़ैर मज़ाहिब मुतास्सिर हों या न हों लेकिन कम से कम हमारे मज़हब में तालीमाते हुसैनी पर अमल करने और उनके नक़शे क़दम पर चलने का शौक पैदा हो। हमारी औरतों में अहलेबैते हुसैन (अ0) की तरह ईमान, इबादत और इताअते ख़ालिक का शौक पैदा हो।

हमारी औरतों और मर्दों को समझना चाहिए कि अगर हम पर फाका गुज़र जाए, अगर हम फ़क़्र की हालत में हों, अगर हम को कहीं मुलाज़मत न मिले, अगर दुनिया हमको ज़लील निगाहों से देखे जो कुछ भी हम पर मुसीबत आए तो हर मुसीबत के बाद भी हमारी तकलीफें असराए अहलेबैते (अ0) की तकलीफों से ज़ाएद कभी बराबर नहीं हो सकतीं। तो क्या इन मुसीबतों पर अल्लाह की पनाह बनी हाशिम की औरतों ने

अपना दीन छोड़ दिया? क्या इबादाते इलाही से ग़ाफिल हो गयीं, क्या अपनी बेपर्दगी को सर झुका कर मन्ज़ूर कर लिया

जनाबे सकीना जिनका सिन तीन या सात साल का था। जो उन औरतों की हद में न थीं। मगर दरबारे यज़ीद में रो रहीं थीं। यज़ीद के सवाल पर आपने जवाब दिया कि वह औरत क्यों न रोए जिसके मुँह को ढाँकने को ज़रा सा कपड़ा भी मयस्सर न हो कि ना महरमों से मुँह छिपा सकें। सबक लें शाहज़ादी के इन अलफाज़ से वह जो कहते हैं कि शरीअत में मुँह का पर्दा लाज़िम ही नहीं है। अगर ऐसा होता तो हमारी शहज़ादी मुँह खुला होने की शिकायत न करतीं और यज़ीद भी जवाब दे सकता था कि मुँह खुला है तो ग़म क्यों है शरीअत में तो मुँह का पर्दा लाज़िम ही नहीं है।

तो क्या जनाबे सकीना के उन बहते हुए आँसुओं के बाद वह औरतें अहलेबैते (अ0) रसूल (स0) की सच्ची चाहने वाली कही जा सकती हैं जो बेपर्दा घूमें, सिनेमा जाएँ, होटलों में ग़ैरों के साथ गुलछरें उड़ाएँ, और आखिर इग़्वा और सिविल मैरेज के अज़ाब में फंसें, और क्या वह मर्द सच्चे हुसैन के शीआ हो सकते हैं जो उन तमाम बेहयाइयों को खुशी के साथ बर्दाश्त करें, न खुदा को पहचानें, न रसूल (स0) को मानें, न नमाज़ पढ़ें न रोज़ा रखें, न अज़ाब व सवाब की फ़िक्र करें। और क्या वह दौलतमन्द सच्चे मोमिन कहे जा सकते हैं जो दीन की बुनियादों के हर हिस्से से आज़ाद हों न हज़ करे, न खुम्स दें, न ज़कात अदा करें और फिर अहलेबैते (अ0) के दोस्तदार होने का दावा करें। □□□

दर्सगाहे कर्बला के चन्द सबक

आकाए शरीअत मौलाना सैय्यद कल्बे आबिद नकवी साहब (ताबा सराह)

यूँ तो जमाने में हज़ारों इंकैलाब आए। दुनिया ने सैकड़ों करवटें बदलीं, नहीं मालूम कितनी आज़ाद कौमें गुलाम बनीं और कितने गुलामों ने तौकें गुलामी उतार फेंका। बड़ी-बड़ी खूनी जंगें हुई, कितनी ही आबादियाँ वीरानों और वीराने बस्तियों में बदल गये। ऐसे भी सुधार करने वाले इस बुराई से भरी दुनिया में आए जिन्होंने बगैर तीर चलाए, बगैर तलवार को नियाम से निकाले जंजीरों और बेड़ियों का इस्तेक़बाल करके तारीख़ के धारे मोड़ दिये, इन्सानि तरज़े फ़िक्र को बदल दिया।

लेकिन वाक़ेआ-ए-कर्बला अपने अनोखे अन्दाज़, अछूते तरीक़े, बेमिसाल कुर्बानियों और मक़सदे कुर्बानी की अहमियत, अपने बाद छोड़े हुए असरात के लिहाज़ से अब तक लाजवाब रहा है और आगे भी बेमिसाल रहेगा। कर्बला के दिल हिला देने वाले अज़ीम हादसे से पहले मुसलमान चन्द ही साल में अपने रसूल की बताई हुई तालीम को भुला चुके थे।

बराबर जुल्म व ज़्यादती ने उनके एहसासात मुर्दा कर दिये थे रसूल (स0) की आँखें देखे हुए, अली (अ0) की सीरत परखे हुए, हसन (अ0) के हुस्ने अख़लाक़ को आज़माए हुए मुसलमान अब इतने गिर चुके थे, उनकी हिम्मतें इतनी पस्त हो चुकी थी कि बदअख़लाक़ियों व दरिंदगियों के इन्तिहाई मुज़ाहरे और ख़िलाफ़ते रसूल (स0) के नाम पर होने वाले शर्मनाक तमाशे और तो और सहाबियत का दावा करने वाले अफ़राद तक की

रगे हमिय्यत को न हिला सकते थे।

लेकिन कर्बला के चटियल मैदान में जुल्म व सितम का आख़िर वक़्त तक मुक़ाबला करके रगे गर्दन कटाने वालों ने रोब व जुल्म की छायाई हुई बदलियों को छोट दिया और कुफ़्र के फैलाये हुए गुबार को इस तरह हटा दिया कि इस्लाम का आफ़ताब फिर अपनी अगली चमक-दमक के साथ आलम को रौशन व मुनव्वर करने लगा। मरने वाले मर गये लेकिन मुसलमानों के एहसासाते मुर्दा को ज़िन्दा कर गये। उन्होंने अपनी जानें दीं मगर ज़ुराअते मोमिन में जान डाल दी, फिर ज़ालिम की दिखवटी शान व शौकत व इज़्ज़त की परवाह न करते हुए सरे दरबार उसे टोका जाने लगा फिर शौक़े रसन व दार उभर आया। फिर नेज़ों को दिल में जगह देने, तलवारों को गले लगाने, ख़न्जरों को चूमने का शौक़ जाग गया। जैसे कर्बला की जंग सिर्फ़ कुछ घन्टे में ख़त्म हो गयी लेकिन नहीं मालूम यह लड़ाई किस अन्दाज़ से लड़ी गयी थी कि आज चौदह सदी के बाद भी हर मुफ़क्किर को अपने अन्दाज़े फ़िक्र के लिहाज़ से और हर तालिबेइल्म को अपने ज़ौक़े तलब के मेयार पर बहुत कुछ मिल जाता है। मैं जानता हूँ कि हुसैन (अ0) का मक़सद उस अज़ीम कुर्बानी से एक था और सिर्फ़ एक यानी इस्लामी तालीमात को उसकी सही बनावट में बाकी रखना। मक़सदे रिसालतमॉब (स0) की हिफाज़त करना और इस तरह रिज़ा-ए-इलाही हासिल करना मगर इस मक़सद के लिए (कुदरत के इशारे और इल्हामे रब्बानी) अन्दाज़े जंग कुछ ऐसा अख़्तियार किया

गया कि तन्हा यही वाक़ेआ हर सोंचने समझने वाले के लिए फानूसे हिदायत बन गया। कौन बड़े से बड़ा फलसफ़ी और ज़माने का अल्लामा है जो किसी मुख़्तसर मज़मून नहीं बड़ी से बड़ी किताब में भी तमाम तालीमाते हुसैनी को एक जगह घेर सके। आइये आज हुसैनी दर्सगाह से कुछ दर्स लेने की कोशिश करें।

वलीद के बैअत के मुतालबे पर इमाम मदीना छोड़कर मक्के का सफ़र करते हैं। शायद इसलिए कि पहाड़ों से घिरा होने की वजह से मक्का बचाव करने की जंग के लिए ज़्यादा ठीक था या इसलिए कि हरमे खुदा होने की वजह से मुसलमान दूर-दराज़ मक़ामात से आते रहते थे लिहाज़ा मुख़्तलिफ़ इस्लामी शहरों से ताल्लुक़ पैदा करने के ज़्यादा मौक़े थे। लेकिन यह क्या कि जब अतराफ़े आलम से मुसलमान हज की गर्ज से जमा हो रहे थे। इमाम हुसैन (अ०) ने मक्का को भी ख़ेरबाद कह दिया। इमाम ने अपने इस तरीक़े से यह सबक़ दिया कि अल्लाह की निशानियों की क्या अज़मत है? जैसे आपने फरमाया हो कि मैं बेपनाह मुसीबत बर्दाश्त कर लूँगा। सफ़ीन-ए-अहले हरम को जुल्म व सितम के थपेड़ों के सुपुर्द कर दूँगा लेकिन हरमे रसूल और हरमे खुदा की अज़मत बर्बाद न होने दूँगा। मक्का से रवाना होते वक़्त इमाम (अ०) के साथ साथियों की अच्छी ख़ासी तादाद थी एक छोटा सा लश्कर साथ था। बज़ाहिर चाहिए था कि रास्ते में जिन-जिन बस्तियों से गुज़रते कामियाबी की उम्मीदें दिलाकर लोगों को साथ लेते जाते, ओहदों की लालच देकर दूर-दूर से बाअसर लोगों को मदद के लिए बुलाते। उस बादशाह का मुक़ाबला था जिसकी हदें सलतनते अरब व अजम को फ़ाँद कर अफ़रीका और हिन्दुस्तान तक पहुँच चुकीं

थीं। मगर इमाम ने आम दुनियातलब सियासतदानों के रास्ते से अलग हटकर जो साथ थे उनमें से भी बहुत सों को ज़ाहिरी फतह और कामयाबी से मायूस करके अपने से जुदा कर दिया ताकि मालूम हो जाए कि जो दुनिया तलबी में साथ होगा वह दिरहम व दीनार से मायूस होकर साथ छोड़ भी देगा और जो मक़सद की अहमियत को महसूस करके साथ होगा वह हर तूफ़ाने बला के मुक़ाबले में चट्टान बन जायेगा।

अभी कुछ ही दूरी तय की थी कि ख़बरे शहादत जनाबे मुस्लिम मिली। अहलेबैत (अ०) की पहली सफ़े मातम बिछी। इमाम ने मुस्लिम की यतीम बच्ची को बुलाकर कुछ ऐसा मुज़ाहेर-ए-शफ़क़त फरमाया कि बच्ची ने घबराकर पूछा क्यों चचा मेरे बाप की तो ख़ैर है? यह मुज़ाहेर-ए-मुहब्बत तो आप यतीमों से फरमाते हैं। यह बज़ाहिर एक एक छोटा सा वाक़ेआ है लेकिन इससे यह पता चलता है कि इमाम का यतीमों और बे वाली वारिस अफ़राद से क्या अन्दाज़ था अपने बच्चों के मुक़ाबले में भी, यतीमों से ऐसा अलग अन्दाज़े शफ़क़त था कि आगोश में पाली हुई बच्ची फौरन होशियार हो गयी। मुसलमानों को इमाम के इस तरीक़े से सीखना चाहिए कि वह यतीमों और बे वारिस अफ़राद से क्या बर्ताव करें। अभी कूफ़ा पहुँचने में चन्द मन्ज़िलें बाकी हैं कि हुर का पैग़ाम रास्ता रोक लेता है। फौजे दुश्मन इमाम के मुक़ाबले में डट जाती है। इमाम देखते हैं कि दुश्मन के जितने सिपाही हैं सब प्यास से बेहाल हैं। घोड़ों तक की ज़बानें मुँह से बाहर हैं। किसी मौक़े परस्त सरदार लश्कर के लिए इससे बढ़कर कौन सा मौक़ा था। एक ही हमले में थके हारे और प्यास से परेशान लश्कर के क़दम उखड़ जाते मगर इमाम ने हुक्म दे दिया

कि जितने प्यासे हैं उन सबको सैराब कर दिया जाए, खुद अपने आप से सिपाहियों को पानी पिलाकर अपनी फौज का पानी का ज़ख़ीरा ख़त्म कर दिया। दुनिया परस्त जो चाहें कहें लेकिन अपने इस अमल से मुअल्लिमे अख़लाक़ ने नर्मी और मुरव्वत और इंसानी हमदर्दी का वह लाजवाब सबक़ दिया है जो क़यामत आने तक याद रहेगा और तारीख़े आलम जिसका जवाब पेश करने से मजबूर रहेगी।

हुसैनी फौज दुश्मन के लश्कर को कोहनियों और हाथों से ढकेलती हुई ज़मीने कर्बला तक पहुँच गयी। लश्कर का पड़ाव पड़ गया। हुसैनी ख़ेमे नहर के किनारे लगा दिये गये दुश्मन का पैग़ाम आता है कि ख़ेमे नहर के किनारे से उखाड़ दिये जाएँ। इस जगह पर सरदारों फौजे यज़ीदी का क़याम होगा। बहादुरों के तयोरियों पर बल पड़ गये, शेर बिफ़र गये, सिपाहियों के हाथ क़ब्ज़ों पर गये। लेकिन इमाम (अ0) ने सर झुका कर कहा : अच्छा अगर यही ज़िद है तो हम अपने बच्चों को लेकर तपते रेगिस्तान में क़याम कर लेंगे मगर अपनी तरफ से जंग में पहल न करेंगे। देखने वाले देखें कि इमामे हुसैन (अ0) ने किस सलामत रवी और सुलहजोई का मुज़ाहेरा फरमाया है और यह बताया है कि इन्सान को इम्कान की आख़री हदों तक मार-काट से दामन बचाना चाहिए।

सअद का नहस बेटा कर्बला में सामने आता है। सुलह की बात की शुरुआत होती है। इमाम अपनी तरफ से नर्म से नर्म शर्ते पेश करते हैं। खुद उमरे सअद के से दुश्मन को भी इमाम के सुलह पसन्द रवैय्ये का इब्ने ज़ियाद को अपने भेजे हुए ख़त में इकरार करना पड़ा। सुलह की बात-चीत इब्ने ज़ियाद की हटधर्मी की वजह से

नाकाम हुई। दुश्मन की फौज ने 9 मोहर्रम को अस्त्र के वक़्त इमाम के ख़ेमों की तरफ हमला कर दिया। इमाम (अ0) की ख़्वाहिश पर मुशकिल से एह रात की मोहलत मिली।

इल्मे इमामत से नज़र हटाते हुए भी ज़ाहिरी हालात के लिहाज़ से अब बचने की कोई सूरत न थी दुश्मन की लातादाद फौज ने इमाम के गिन्ती के साथियों को हर तरफ से घेरे में ले लिया था। इस हालत में नतीजा मालूम था। अब तो जितनी भी जल्द जंग ख़त्म हो जाती उतनी ही मुसीबतें कम से कम रहतीं। कम से कम मुजाहिद रात और दिन की सख़्त गर्मी की नाक़ाबिले क़यास शिद्दत से महफूज़ रह जाते लेकिन इमाम एक रात की मोहलत खुदा की इबादत के लिए माँग कर हर मुसलमान ख़ासतौर से मोमनीन को सबक़ देते हैं कि नमाज़ और तिलावते कलाम मजीद का कैसा ज़ौक़ व शौक़ होना चाहिए।

पूरी रात इबादत में गुज़ारने वाले मुजाहिद इमामे वक़्त की इक्तेदा में तयम्मुम से सहरी का फ़रीज़ा अदा करते हैं। दुश्मन के तीर मुसल्लों पर गिर कर पैग़ामे जंग लाते हैं। बूढ़े जोशे शुजाअत में, जवान और बच्चे जिहाद के शौक़ में बड़ों के साथी बनते हैं, झुकी हुई कमरें पटकों से कस कर बाँधी जाती हैं, सुफूफ़े जमाअत सफ़े जंग में बदलती हैं मगर जो मसावात का सबक़ नमाज़ ने दिया था अब भी बाकी है। हबशी व आका गुलाम पहलू बपहलू होकर, शाने से शाना मिलाकर दुनिया को मसावात का सबक़ देते हैं।

मुजाहिद ज़ख़्मों पर ज़ख़्म खाकर गिरने लगे इमाम (अ0) ने जिस तरह हाशमी बच्चों, मासूमों के पाले हुए अकबर व कासिम औन व

मुहम्मद के सर ज़ानों पर रखे। इसी तरह गुलामों को भी यह सरफराज़ी हासिल हुई कि रूमी और हब्शी गुलामों ने जन्नत के जवानों के सरदार के ज़ानों पर सर रख कर जान दी।

एक हब्शी गुलाम जो बहादरी में झूमता हुआ आगे बढ़ा, दस्तबस्ता अर्ज़ की। मौला मरने की इजाज़त हो। इमाम ने निगाहे मुहब्बत डालकर फरमाया : ऐ जौन जब तक आराम व राहत थी, हमारे साथ रहे अब क्या ज़रूरत कि हमारी वजह से अपने को मुसीबत में डालो। मैं खुशी से इजाज़त देता हूँ जहाँ चाहे चले जाओ। गुलाम के तेवर बदले, वाह मौला वाह आपकी बदौलत हमेशा तो नेमतों से फाएदा उठाया, आपके दस्तरख़्वान के टुकड़े तोड़ता रहा और मुसीबत के वक़्त साथ छोड़ दूँ। यह गुलाम को दुनिया वालों की निगाह में अपनी ज़िल्लत का एहसास था लिहाज़ा दस्तबस्ता अर्ज़ की। मौला मैं जानता हूँ मेरा ख़ून काला है, जिस्म से बदबू आती है, हसब न नसब पस्त है मगर खुदा की क़सम अपने बदबूदार जिस्म का यही काला ख़ून बनी हाशिम के पाक व पाकीज़ा ख़ून में मिलाकर रहूँगा।

जौन घोड़े से गिरे। इमाम सरहाने गए, दुआ के हाथ बुलन्द किए। मालिक! जौन को अपने रंग की सियाही और जिस्म की बदबू का बहुत एहसास था। पालने वाले! इसके जिस्म की सियाही को नूर से और बदबू को खुशबू से बदल दे। दुआ-ए-इमाम (अ0) का असर यूँ ज़ाहिर हुआ कि शोहदा-ए-क़र्बला में किसी जिस्म में नूर न था बदन में खुशबू न थी मगर इस बाग़े शहादत में भी मुत्ताज़ तरीक़े पर जौन का जिस्म महक रहा था और नूर का

कुब्बा हर निगाह को अपनी तरफ़ मुतवज्जह कर रहा था।

अस्हाब दरज-ए-शहादत पर फाएज़ हो चुके। अक़रबा भी शहीद हो चुके, अली अकबर मैदाने जंग में बाप को आवाज़ देते हैं। नौजवान फरज़न्द शबीहे पैग़म्बर बूढ़े बाप के सामने दम तोड़ रहा है, बरछी की खटक पहलू बदलवा रही है, फातिमा (स0) का दूध ख़ून बनकर हुसैन (अ0) की निगाह के सामने जारी है ऐसे वक़्त में किस इन्सान के होश व हवास ठीक रह सकते हैं लेकिन जब बहन घबराकर खेमे से निकली तो हुसैन (अ0) ने जवान की मैय्यत रख दी। आँसू पूछ डाले, धड़कते दिल को संभाला और ज़ैनब (स0) को अबा का साया करके खेमें में पहुँचाकर मुसलमान औरतों को पर्दे की अहमियत बतायी।

आफ़ताब ढलते-ढलते नुक़्ता अस्र पर पहुँचा। इमाम (अ0) मैदाने जंग में अकेले और तन्हा खड़े हैं।

न लश्करे न सिपाहे न कसरतुन नासे
न अकबरे न अली असगरे न अब्बासे

दाएँ और बाएँ देख कर आवाज़ देते हैं :-

अमा मन नासिरिन यन्सुरना

अमा मन दानत युद्नीना अन्ना

अमा मन मुगीसु युगीसुना

मौला! क्या अब भी उम्मीद थी कि बदबूख़्त लश्कर में कोई हक़ की आवाज़ सुन सकेगा। क्या कुफ़्र व जुल्म के सियाह दिल में नूरे हिदायत के आ जाने की भी गुन्जाइश है?

□□□

हुसैन^{अलैहिस्सलाम} और हम

अल्लामा नज्म आफन्दी साहब (ताबा सराह)

क्या हुसैन (अ0) की अजीमुशशान शहादत का राज कुछ रुखसारों पर बहने वाले आँसुओं में छुपा है, क्या चालीस रोज़ सीनाज़नी और एक रोज़ की फाकाकशी हुसैन (अ0) की अदमुल मिसाल कुर्बानी का नतीजा हो सकती है?

क्या कर्बला के दिल हिला देने वाले तास्सुरात की दुनिया इस क़दर महदूद समझी जाए? क्या हुसैन (अ0) और हुसैन (अ0) के बच्चों का खून सिर्फ़ इस मक़सद के लिए पानी की तरह बहाया गया था कि एक रोने वाला गिरोह तैयार किया जाए?

बराए खुदा यह कौन सा फलसफा है कि हुसैन (अ0) इसलिए शहीद किए जाएँ कि हुसैन (अ0) पर रोने वाले पैदा हों।

क्या हमारी सियाहकारियों के दफ़्तर धोने के लिए हुसैन के खून की ज़रूरत थी। कौन है जो इन सवालों का जवाब हॉ में दे सकता है?

हुसैन (अ0) को क्यों शहीद किया गया?.....हुसैन (अ0) दुनिया से क्या चाहते थे? हुसैन (अ0) से दुनिया क्या चाहती थी?.....हुसैन (अ0) ने यह कुर्बानियाँ क्यों गवारा कीं?

क्या सिर्फ़ हुसैन (अ0) पर रोना हुसैन (अ0) की मेहनत का सही एतराफ़ है। हुसैन (अ0) के करोड़ों मातम करने वालों में कितने लोग हैं जिन्होंने कभी इन मसाएल पर गौर करने की तकलीफ़ बर्दाश्त की है? यह दो चार सवाल हैं

जिन पर इस शहीदे आज़म की यादगार में क़लम उठाने की ज़ुराअत कर रहा हूँ। हुसैन (अ0) को क्यों शहीद किया गया? यह कोई राज़ नहीं है, न कोई ऐसा पुरपेच मसला है जिस पर बड़ी-बड़ी मोटी किताबें लिखने की ज़रूरत हो। हुसैन के कब्ज़े में कोई सलतनत न थी जिसके लिए किसी हुकूमत के खिलाफ़ तलवार उठायी थी। न कोई पोशीदा रेशादवानी की थी। हुसैन (अ0) एक अच्छे आदमी होकर रहे।

यही उनकी शहादत का क़वी सबब था। अगर हुसैन (अ0) (मआज़ल्लाह) बुरे हो सकते, बुरे बनाए जा सकते, तो हुकूमत की तलवार उनकी गर्दन से दूर रहती। मुझे कोई पेचदार बात कहनी नहीं है मैं जो कहूँगा सादे लफ़्ज़ों में और सामने की बात जिसके लिए न क़लम की मअरका आराई दरकार है न मन्तिकी दलाएल। हुसैन (अ0) दुनिया से क्या चाहते थे? हुसैन दुनिया से अपने लिए कुछ नहीं चाहते थे। दुनिया के पास हुसैन (अ0) के काबिल कुछ न था। हुसैन (अ0) के पास वह सब कुछ था जो दुनिया के पास न था और जिसकी दुनिया को ज़रूरत थी। हुसैन (अ0) इन्सान को सही माने में इन्सान देखना चाहते थे। हुसैन (अ0) से दुनिया क्या चाहती थी। यह कि हुसैन (अ0) भी हम में से एक फर्द हो जाएँ। हुसैन की हस्ती सिर्फ़ कौल से ही नहीं अमल से भी यह बताती थी कि खुदा है और यह ख़तरनाक था उन लोगों के लिए जिनकी मसलेहत यह चाहती थी कि खुदा नहीं है। कहाँ यह ज़ब्बा

कि हमारे लिए सब कुछ हो, कहाँ यह तालीम कि सबके लिए हो चाहे तुम्हारे लिए कुछ न हो। हुसैन (अ0) शहनशीनों को मेहराबे इबादत बनाना चाहते थे। लोग थे कि मेहराबे इबादत में दर्जे कायम कर रहे थे। मसावात का लफ़्ज़ भी उन लोगों के लिए कड़वा था जिनकी ज़बानों को चटखारे लेने की आदत थी, जिनकी गर्दनें बुलन्द थीं, जिनके पेट भरे हुए थे, जिनका मकोला था 'तुम बाग़ लगाओ हम फल खाएँ' हुसैन (अ0) उनको गले से लगाकर जिनकी कमज़ोर गर्दनों पर लोग सवार थे, इस्लाम की उस तालीम को याद दिलाते थे जिसके भुलाने की कोशिश में पचास साल का लम्बा ज़माना ख़र्च किया गया था।

अमन व आमान के शहज़ादे हुसैन (अ0) की ख़ामोश ज़द्दोज़ेहद, ख़ून की बारिश और तलवारों की झंकारों से न बदलती अगर हुसैन (अ0) से यह चाहा जाता कि तुम भी तस्दीक़ कर दो जो कुछ हम कर रहे हैं वह हक़ है।

और हुसैन (अ0) ने यह कुर्बानियाँ क्यों गवारा की इसलिए कि किसी क़ौम के एहसासात जब मुर्दा हो जाते हैं तो जान देकर ज़िन्दा किये जाते हैं। तुम महकूम बनने के लिए पैदा किये गये हो जो हम दें वह ले लो। ग़नीमत यह है कि हम तुमको इस फ़िज़ा में साँस लेने देते हैं जिसमें हम साँस ले रहे हैं, हमारी आँखों से देखो, हमारे कानों से सुनो और हमारी ज़बान से बोलो। इस माहोल और आबो हवा में परवरिश पाए हुए लोगों की इस्लाह कोई आसान काम न था। हुसैन (अ0) आने वाले ख़तरे से आगाह थे और अगर मा फौकुलआदत कुव्वत से नज़र भी हटा ली जाए तो आसार व कराएन बता रहे थे कि वह होने वाला है जो हुआ। हुसैन के पास वक़्त भी था और रास्ते भी खुले हुए थे सिर्फ़ इराक़ का रास्ता न था।

मुमकिन था कि हुसैन (अ0) अरब के हुदूद से निकल जाते।

लेकिन यह हुसैन (अ0) ने नहीं किया। हुसैन (अ0) अगर मिनजानिब अल्लाह हिदायते ख़ल्क के लिए मामूर न भी होते तब भी दो बड़े सबब थे कि वह इस कुर्बानी के लिए अपने आपको तैयार करें।

क़ौम जो बिगड़ रही थी वह हुसैन (अ0) के नाना की बनायी हुई थी। यह भी न होता जब सुक़रात ख़ल्कुल्लाह की ख़िदमत के लिए ज़हर का ज़ाम पी सकता है तो हुसैन (अ0) तो फिर हुसैन (अ0) थे। मदीने में बैठकर मौत का इन्तिज़ार नहीं किया बल्कि कर्बला तक इस्तेक़बाल किया यह हुसैन की साँच थी कि उन्होंने अपनी शहादत के लिए कर्बला को पसन्द किया। कुछ लोगों ने हमदर्दी से हुसैन को रोका था कि मदीना न छोड़ें लेकिन हुसैन जानते थे कि बफ़र्जे मुहाल रसूल (स0) के रौज़े का एहतेराम भी किया गया (जिसके बज़ाहिर कोई आसार न थे) तो ज़हर का प्याला तैयार हो सकता था। मदीने की मस्जिद मौजूद थी, लेकिन किसी इब्ने मुल्जिम का मिल जाना भी नामुमकिन न था और कुतामा भी दस्तयाब हो सकती थी। और फिर तारीख़ सिर्फ़ दो लफ़्ज़ों में हुसैन की शहादत का तज़क़िरा करके ख़ामोश हो जाती और हुसैन (अ0) अपनी शहादत से जो काम लेना और जो असर पैदा करना चाहते थे वह न होता। असर पैदा करना मक़सूद था सिर्फ़ इतना ही नहीं कि क़ौम यह फैसला कर सके कि हुसैन (अ0) हक़ पर थे और यज़ीद नाहक़ पर, आलमगीर असर काएम करना था, एक ऐसी हुकूमत के खिलाफ़ जो आज़ादों को गुलाम बना रही थी, क़ौम की तबाही अख़लाक़ के ज़िम्मेदार और अपनी मसलहतों के मातहत इस तबाही व

बर्बादी की तकमील की कोशिशों में सरगर्म थी, वह जज़्बात जिन्हें ग़ैरत व हमियत के नाम से मौसूम किया जाता है और जो क़ौमों को उभारते हैं, बतदरीज फना होते जा रहे थे। लोग भूल चुके थे कि आज़ादी हमारा फ़ितरी हक़ है। नतीजा यह होता कि इस्लाम ने यही सिखाया था, हुसैन (अ0) की शहादत ने यह बता दिया बल्कि ज़हन नशीन कर दिया कि इस्लाम ने क्या सिखाया था। अब तुम कितनी ही तारीकी फैलाओ देखने वाले इस्लाम को हुसैन (अ0) की रोशनी में देख लेंगे। क्या सिर्फ़ हुसैन (अ0) पर रोना हुसैन (अ0) की मेहनत का सही एतराफ़ है।

मेरा असल मौजू यही है और मुझे इसी के मुताल्लिक़ कुछ कहना है। अगर क़ौम ठण्डे दिल से इस सवाल पर ग़ौर करे "क्या सिर्फ़ हुसैन (अ0) पर रोना हुसैन (अ0) का सही एतराफ़ है" तो बहुत मुश्किल है कि फ़ैसला "हाँ" पर हो सके।

हम ने (हुसैन अ0 की मातमदार क़ौम ने) "हुसैन (अ0) के करेक्टर से क्या असर लिया है" "गिरया" हुसैन (अ0) का नाम सुनकर रो दो लेकिन हुसैन (अ0) के अमल और उन तवक्कोआत से जो हुसैन (अ0) के नाम से वाबस्ता हैं कोई सरोकार न रखो। मज्लिसों को शाएरी का मैदान, दिलचस्प शाएराना सलीस तक्रीरों का मरकज़, सोज़ख़ानी और नौहाख़ानी का दंगल बना दो। यह हुसैन (अ0) की कुर्बानियों का माहसल है? जिस क़ौम में इतना बड़ा और अहम वाक़ेआ हो जाए जो एक आलम को दावते अमल दे रहा हो, तारीख़ जिसकी मिसाल न पेश कर सके, जिसका हर पहलू सबक़ लेने वाला और दर्से अमल की बेहतरीन मिसाल है। जो हर साल इस तरह ताज़ा किया जाता है जैसे आज ही का वाक़ेआ है, इस क़ौम से क्या उम्मीद करनी चाहिए। सिर्फ़

चन्द आँसू!! ज़रा से ग़ौर की ज़रूरत है। कौन सी क़ौम है जिसके हीरो ऐसी जोश पैदा करने वाली मिसाल छोड़ गए हैं। क़ौम बन जाती अगर जोश से काम लिया जाता और सीनाज़नी तक महदूद न रहता। इस से ज़्यादा किसी क़ौम व मिल्लत की बदनसीबी क्या हो सकती है कि कर्बला का सा अहम वाक़ेआ एक मज़हबी रस्म बन जाए। मैं मज्लिस व मातम, अलम व ज़रीह, मातमी जुलूस वग़ैरा का मुख़ालिफ़ नहीं हूँ, खुद अज़ादार हूँ मेरे घर में अज़ादारी होती है, मेरा अकीदा है कि यह मातमी जुलूस क़ौमों को हुसैन (अ0) और हुसैन (अ0) के ज़रिए से इस्लाम की तरफ़ ध्यान दिलाने के लिए बेहतरीन चीज़ें हैं। मुझे तारीख़ दानी का दावा नहीं, मैं एतमाद के साथ कह सकता हूँ कि यह मुज़ाहेरे का ज़बरदस्त उस्लू हम शीओं की ईजाद है मगर कम से कम ऐसा यह पुरअसर और शानदार मुज़ाहेरा किसी दूसरी क़ौम में नहीं देखा गया। इस क़ौम को क्या कुछ न होना चाहिए था और यही क़ौम आज कुछ नहीं है।

मैं यहाँ क़ौम की अख़लाकी हालत, आपस के बर्ताव, रवादारी, उमरा व गुरबा के ताल्लुकात, उनकी ज़हनियत इन मामलों पर तबसेरा नहीं करूँगा इस के लिए एक दफ़्तर की ज़रूरत है। मुझे सिर्फ़ चन्द क़ौमी मसाएल का ज़िक्र करना है और बस। हुसैन (अ0) मज़लूम और यज़ीद की जंग हक़ और नाहक़ की जंग थी। हम हक़ के तरफ़दार हैं और हुसैन के इसलिए मददाह हैं कि वह हक़ पर अड़ गए और हक़ के लिए अपनी ही जान नहीं बल्कि अपनी जान से ज़्यादा अज़ीज़ जानें भी कुर्बान कर दीं। लेकिन अमल तो दरकिनार आज हम में इतनी अख़लाकी ज़ुराअत नहीं कि

(बकिया पेज 23 पर)

सिजदा उस एक तेग तले का

फखरे मिल्लत डाक्टर मौलाना सैय्यद कल्बे सादिक साहब किब्ला

कुर्आन मजीद ने खुदाए वाहिद की परस्तिश व इबादत पर जिस क़द्र ज़ोर दिया है इतना ज़ोर और किसी बात पर नहीं दिया। उसने शिर्क को क़तई हैसियत से नाक़ाबिले माफी जुर्म क़रार दिया है। उस माबूदे बरहक़ की पैदा की हुई लामहदूद काएनात में हमारा पूरा निज़ामे शम्सी एक ज़र्रे की भी हैसियत नहीं रखता। इस मुख़्तसर से निज़ामे शम्सी के एक अदना तुफ़ैली सैय्यारा ज़मीन के एक छोटे से गोशे में अगर एक इन्तिहाई कमज़ोर व नातवाँ और फ़ानी मख़्लूक़ किसी ग़ैरे खुदा के सामने सरे इबादत झुकाती है तो उसकी इस हरकत से उस माबूदे हकीकी की लामुतनाही शहंशाहियत ममलकत व जबरुत को क्या ख़तरा पैदा हो सकता है कि वह हर जुर्म को नज़रअन्दाज़ करने पर तैयार हो मगर शिर्क को बर्दाश्त करने पर तैयार न हो।

बात दर अस्ल कुछ और है शिर्क से अल्लाह की पनाह ज़ाते ख़ालिक़ को कोई नुक़सान नहीं पहुँचता बल्कि शाहकारे ख़िलक़त व मस्जूद मलाएका इन्सान जब पत्थरों के सामने अपना सर ज़मीन पर रखता है तो अपने आपको जमादात से भी पस्त क़रार देता है जिस इंसान के क़ब्जे में पूरी दुनिया क़रार दी गयी है वह जब अपने आपको पत्थरों तक का मोहताज समझने लगता है तो अपने आप को "अहसनि तक़वीम" की मन्ज़िल से गिराकर "अस्फ़ला साफ़िलीन" की इन्तिहाई पस्ती तक पहुँचा देता है।

ताहम इंसान व इंसानियत को पस्त तरीन

मन्ज़िल तक पहुँचा देने वाली यह बुत परस्ती ख़ास जिहालत की पैदावार होती है। वही जिहालत जिसे रसूल (स0) ने इन्सान की सारी ख़राबियों की जड़ क़रार दिया है। इसलिए आफ़ताबे इल्म के तुलू होने के साथ ही इस किस्म की बुतपरस्ती की लौ माँद पड़ जाती है।

इस बुत परस्ती से ज़्यादा ख़तरनाक बुतपरस्ती वह होती है जब पत्थरों के बुत गोशत व पोस्त के बुतों की शक़ल में बदल जाते हैं और नमरूद व फिरऔन के ऐसे खुद पसन्द, नप्स परस्त, ज़ालिम व जाबिर फ़रमाँ रवा अपनी खुदाई और रुबूबियत का एलान करके ख़ल्के खुदा से अपनी बन्दगी व इबादत का इक़रार लेकर उनके तमाम इन्सानी हुकूक़ को सल्ब व ग़सब कर लिया करते हैं वह उनके माल व जान ही के मालिक नहीं बन बैठते उनकी औरतों की इज़्ज़त व आबरू तक के मालिक व मुख़्तार बन जाते हैं और अगर उनकी खुदाई को किसी पैदा होने वाले बच्चे से ज़रा ख़तरा पैदा होने का अन्देशा हो तो अपनी हुकूमत बल्कि रुबूबियत व उलूहियत को बचाने के लिए वह हज़ारों बच्चों को पैदा होने के साथ माँ के सामने ही ज़िह्न कर देने से बाज़ नहीं आते।

हमारे करीम व रहीम ख़ालिक़ ने पहली किस्म के बुतपरस्तों को अक्सर व बीश्तर सम्भल जाने को मौका भी दिया है अज़ाब में ताख़ीर भी की है मगर इस दूसरी किस्म की बुतपरस्ती को तहस-नहस करने में उसने कभी ताख़ीर नहीं की

इधर इस किस्म की बुतपरस्ती ने सर उभारा, उधर उसकी तलवार चली, नमरुद पैदा हुआ तो फौरन इब्राहीम (अ0) उसको खाक चटाने के लिए भेज दिये गये और फिरऔन ने अपनी खुदाई का एलान करके बनीइस्राईल को जुल्म व इस्तेबदाद का निशाना बनाया तो मूसा (अ0) अपना डण्डा सम्भाले उसके दरबार में घुस गये और उस वक्त तक करार न लिया जब तक उसकी उलूहियत का बेड़ा बहरे अहमर की मौजों में न डिबो दिया और कमज़ोर व नतवाँ बनी इस्राईल को चश्मे ज़दन में फिरऔनी ममलकत का वारिस व मालिक न बना दिया।

लेकिन खल्फ़े खुदा पर सबसे बड़ी मुसीबत उस वक्त पेश आती है जब यही नमरुदियत व फिरऔनियत यही नमरुदी व फिरऔनी नफ्स परस्ती व जाह परस्ती "लाइलाहा इल्लल्लाह" का ज़बानी इकरार करके खुदाए वाहिद के हकीकी परस्तारों की सफ़ों में शामिल हो जाती है और दीनदार अफराद की सादा लौही से फाएदा उठाते हुए आहिस्ता-आहिस्ता नियाबत और ख़िलाफ़ते रसूल (स0) के ऐसे मुक़द्दस मन्सब को मुलूकियत व शहंशाहियत की शक्ल दे देती है।

इस्लामी शरीअत लोगों के जान, माल, इज़्ज़त, आबरू, अक़ल, दीनी आज़ादी और नस्ल की हिफ़ाज़त को अपने बुनियादी मक़ासिद करार देती है वह दुनिया में सिर्फ़ अदल, इन्साफ़, मसावात और आज़ादी की हुक़मरानी देखना चाहती है और सद्दे अव्वल में उन्हें इक़दार को समाज में जारी करने के लिए जिस मुसलसल जिहाद का अहद मुसलमानों से लिया जाता था उस अहद को इस्लामी इस्तेलाह में बैअत कहा जाता था मगर जब ख़िलाफ़त ने मुलूकियत की शक्ल इख़्तियार कर ली तो मुसलमानों से जिहादे हक़

पर बैअत लेने के बजाए बादशाह सलामत की गुलामी पर बैअत ली जाने लगी और मुसलमानों से राहे हक़ के सिपाहियों की वर्दी उतरवा कर उन्हें लिबासे गुलामी पहनाया जाने लगा।

लेकिन चूँकि आज़ादी के मतवालों को गुलाम बनाने का यह सारा खेल परचमे लाइलाह से ज़ेरे साया और मस्जिदों की छाओं में अन्जाम दिया जा रहा था इसलिए इस्लाम की मुहब्बत में डूबे हुए मुसलमान सिर्फ़ ज़ाहिर को देखते रहे उसी नुमाइशी इस्लाम के पीछे छुपे हुए फिरऔनियत व नमरुदियत के चेहरों को न देख सके।

इस किस्म की नाम निहाद इस्लामी मुलूकियत में सब कुछ होता है। दुलहन की तरह पैरास्ता मस्जिदें होती हैं, मुतल्ला व मुज़हहब कुर्आन होते हैं। मस्जिदों में हुकूमतों के तनख़्वाहदार इमाम होते हैं। शानदार हसीन व जमील मिम्बर होते हैं मगर साथ ही हुकूमत के वज़ीफ़ा पाने वाले सही मगर क़ारी भी होते हैं और मिम्बरों पर क़ाबिले ख़रीद व फ़रोख़्त सही मगर ख़तीब भी नज़र आते हैं यह सब होता है मगर वह मक़ासिद व इक़दार कहीं नहीं दिखायी देते जिनको आम करने के लिए इस्लाम आया था। ज़ाहिरी चमक-दमक तमतराक़ होता ही इसलिए है कि मुसलमान बस इन ही चीज़ों के देखने में ऐसा मगन रहे कि कुचले हुए समाजी इन्साफ़, पिंसी हुई इस्लामी मसावात और चूर-चूर आज़ादी-ए-बशर पर उनकी नज़र न पड़ सके। चुनानचे परचमे तौहीद के बिलकुल नीचे और मस्जिदों के ज़ेरे साया इस्लामी दौलत सिर्फ़ चन्द ख़ानदानों में सिमटती रही। हुकूमत के ख़िलाफ़ हल्की सी ज़बान खोलने वालों की ज़बानें खिंचती रहीं। हक़ व इन्साफ़ की बात करने वालों को

सरेदार लटकाया जाता रहा। ज़रा-ज़रा से शक पर अफराद ही नहीं ख़ानदानों को तहे तैग़ किया जाता रहा, घर, घर वालों पर गिराये जाते रहे मगर चूँकि यह सब "लाइलाहा इल लल्लाह" और तकबीर के नारों की गूँज में हो रहा था इसलिए लोग इसी को इस्लाम समझते रहे।

दरअसल इस्लाम, कुर्आन, मेहराब और मिम्बर की आड़ में छुपे हुए नमरूद और फिरऔन की गिरेबान पर हाथ डालने के लिए बसीरत भी दरकार थी और शुजाअत भी इस लिए 60 हिजरी में जब वारिसे अम्बिया नवास-ए-रसूल (स0) हुसैन इब्ने अली (अ0) से यज़ीद की बैअत का मुतालबा हुआ तो हुसैनी बसीरत यूँ सामने आयी कि आपने यह नहीं फरमाया कि मैं यज़ीद की बैअत नहीं करूँगा बल्कि आपने इरशाद फरमाया कि : "मुझ जैसा शर्ख़स तुझ जैसे शर्ख़स से बैअत नहीं कर सकता।" इस एक जुम्ले में सिर्फ़ इन्कारे बैअत नहीं है बल्कि इन्कारे बैअत की पूरी तारीख़ सिमटी हुई है। इस जुमले का मफहूम यह है कि मेरे ऐसों ने यज़ीद ऐसों की बैअत तारीख़ के किसी दौर में नहीं की है यानी मुझ से बैअते यज़ीद का मुतालबा करने वालों पहले तारीख़े इब्राहीम, मूसा, ईसा (अ0) और खुद रसूल (स0) की सीरत को देख लो। अगर इब्राहीम (अ0) ने नमरूद के सामने सर झुका दिया होता, अगर मूसा (अ0) फिरऔन के सामने सिजदे में गिर गए होते, अगर ईसा (अ0) ने रोमन इम्पायर की गुलामी का इकरार कर लिया होता और अगर हुज़ूर मुश्रीकीने मक्का के सरदारों के सामने सरे इताअत झुका देने पर तैयार हो गये होते तो मैं भी यज़ीद की बैअत कर लेता। हुसैन (अ0) का जुमला खुद बता रहा है कि इमामे वक़्त ने मिम्बरों, मस्जिदों, और सुनहरे कुर्आनों की पीछे

छुपे हुए फिरऔन व नमरूद को पहचान लिया था यानी जब फिरऔनियत व नमरूदियत रुबूबियत की खुली हुई शक़ल होती है तो माबूदाने बातिल के दअ्वा-ए-खुदाई के जवाब में लाइलाहा कहा जाता है और जब यही ख़बासतें इस्लाम के लिबास में ज़ाहिर होती हैं तो "ला युबायिअु मिसलिह" का नारा बुलन्द किया जाता है, हक़ के नुमाइन्दों की तारीख़ यह है कि वह बातिल के सामने कभी सर नहीं झुकाते न इबादत की शक़ल में न बैअत की सूरत में।

बसीरत के बाद अब शुजाअत की नौबत थी शुजाअत तलवार खींचने ही का नाम नहीं उसकी रूह, सब्र और कुव्वते बर्दाश्त है हुसैन (अ0) ने मुतालब-ए-बैअत के जवाब में ला कहकर इन्कारे बैअत किया तो अपने ऊपर आने वाली मुसीबत को नज़रों के सामने रख लिया था और मुकाबले के लिए अपने आपको तैयार कर चुके थे। मदीने में नाना का मज़ार, माँ की कब्र, भाई की कब्र छोड़ना पड़ी, छोड़ दी, जिसने बहुत से हज पैदल किये थे उसे ऐन हज के मौक़े पर हुरमते काबा बचाने के लिए हज को छोड़ कर मक्का को ख़ैरबाद कहना पड़ा, ख़ैरबाद कर दिया। राहे कूफ़ा में अपने चचा के बेटे हज़रत मुस्लिम बिन अक़ील की कूफ़ा में मज़लूमाना शहादत की ख़बर मिली, सब्र व शुक्र के साथ सुन ली फिर इब्ने ज़ियाद के लश्कर ने हुर की सरबराही में हुसैन का रास्ता बन्द किया तो हुसैन ने दुश्मन के प्यासे लश्कर पर अपने पास मौजूद पानी की सबील खोलकर इस्लामी इक़दार के पैधों की आबियारी की। दूसरी मोहर्रम को कर्बला पहुँचे, सातवीं मोहर्रम से पानी बन्द कर दिया गया। शबे आशूर को एक रात की मोहलत ली जो सिर्फ़ इसलिए थी कि एक तरफ़ जी भरकर

इबादत कर लें तो दूसरी तरफ अपने सिपाहियों को खुली आज़ादी दे दें कि जो जाना चाहे वह जा सकता है न किसी पर कोई ज़ब्र है और न कोई पाबन्दी जो साथ रहे वह यह समझकर रहे कि कल अपनी जान नहीं इस्लाम के बचाने का मरहला सामने होगा। सुब्हे आशूर हुई तो हुसैन (अ0) ने मैदाने जंग से शहीदों के जनाज़े उठाना शुरू कर दिये, अपने हों या ग़ैरे बनी हाशिम, आज़ाद हों या गुलाम सबके साथ एक बर्ताव, एक रवैय्या एक तरह से क़दरदानी। जिस तरह अपने दम तोड़ते जवान बेटे के रुख़सार पर रुख़सार रखा उसी तरह दम तोड़ते हुए गुलामों जौन और वाज़ेह के रुख़सारों पर रुख़सार रखा। ज़ख़्म खाते रहे, लाशे उठाते रहे, प्यास भड़कती रही मगर चेहरे पर सुख़्की ही रही। हुसैन (अ0) क्या बैअत करते जबकि हुसैन (अ0) की गोद की पाली चार बरस की मासूम बच्ची तक ने हुसैन (अ0) की रुख़्सते आख़िर के मौक़े पर यह मासूमाना फरमाइश तो की कि हमें नाना के रौज़े पर पहुँचा दीजिये मगर इस बच्ची तक ने यह न कहा कि बाबा यज़ीद की बैअत कर लीजिये कि चैन की सांस ले सकें।

अपनी शहादत से क़ब्ल हुसैन एक छः माह के प्यासे बच्चे को गोद में लेकर मैदाने कर्बला में आ गये। बज़ाहिर इसलिए कि बच्चे के लिए पानी का सवाल करें मगर हकीक़त में इसलिए कि फिरऔनियत के चेहरे पर पड़ी हुई इस्लाम की आख़री नकाब को भी तार-तार कर दें। सवाले आब पर बच्चे की कोमल गर्दन को तीर का निशाना बना दिया गया। यह तीर देखने में बच्चे के गले पर पड़ा था मगर हकीक़त में इस तीर ने यज़ीदियत के चेहरे पर इस्लाम की उस नकाब को तार-तार कर दिया था

जिसके पीछे फिरऔनियत का मकरूह चेहरा पनाह लिए हुए था।

अग्ने आशूर के लम्हे थे, कर्बला की झुलसती ज़मीन थी, जब ज़ख़्मों से चूर-चूर प्यास की शिद्दत से निढाल रसूल (स0) के नवासे हुसैन (अ0) ने अपना सर आख़री बार माबूद की बारगाह में सिजदा बजा लाने के लिए ज़मीन पर रखा। उर्दू के यगाना शाएर मीर की नज़र में यही सिजदा थी जब उन्होंने कहा :

शैख़ पड़े मेहराबे हराम में पहरों दोगाना पढ़ते हैं
सिजदा उस एक तेग़ तले का उनसे हो तो सलाम करें

हुसैन (अ0) सिजदे से खुद सर न उठा सके बल्कि किसी और ने काट कर नेज़ें पर उस सर को उठाया। इधर एक सूरज नेज़े पर तुलू हो रहा था उधर कर्बला के उफ़क़ पर आफ़ताब, गोश्-ए-मगरिब में डूब रहा था।

यह कहके डूब गया आफ़ताबे आशूरह

रहे हुसैन (अ0) की ता हशर रौशनी बाकी

ख़ेमे जला दिए गए। हुसैन (अ0) की लाश यज़ीदियों ने घोड़ों से पामाल कर दी। 11/मोहर्रम को हुसैन (अ0) के अहलेबैत (अ0) कैद करके शोहदा के कटे हुए सरों के साथ पहले सूबाई राजधानी कूफ़ा में इब्ने ज़ियाद के दरबार में ले जाए गए फिर उन्हें यज़ीद के पाय-ए-तख़्त दमिशक़ के सजे सजाए दरबार में लाया गया। ज़र में कमर गुलाम दस्तबस्ता खड़े थे। सिंध से लेकर स्पेन तक पर बनामे इस्लाम हुक्मरानी करने वाला डिक्टेटर कभी फतह व कामियाबी के आरज़ी नशे में चूर कभी कटे हुए सरों को देख कर मुस्कुराता था और कभी जंजीरों में जकड़े हुसैन (अ0) के बीमार बेटे जैनुलआबेदीन (अ0) को और

रस्सियों में जकड़ी बीबियों को देखकर कहकहे लगाता था।

फतह के बाजों की आवाजें दरबार के अन्दर आ रही थीं। यज़ीद ने रसूल (स0) की नवासी, अली (अ0) व फातिमा (स0) की बेटी, हुसैन (अ0) व अब्बास (अ0) की बहन ज़ैनब से कहा यह बाजों की आवाजें सुन रही हो, अब बताओ कि कौन जीता और कौन हारा। बहादुर बाप की शेर दिल बेटी ने इन्तिहाई खुदएतमादी के साथ जवाब दिया कि कौन हारा, कौन जीता यह

अगर देखना है तो ज़रा ठहर जा। अभी मस्जिदों के मीनारों अज़ान की आवाज़ बुलन्द होगी अल्लाह की किबरियाई और उसकी वहदानियत की आवाज़ गूँजेगी। हमारी जंग इस आवाज़ को बचाने के लिए थी थोड़ी देर बाद तेरे बाजे बन्द हो जाएँगे मगर आवाज़े अज़ान अब सुब्हे क़यामत तक दुनिया के गोशे-गोशे से बुलन्द होकर अल्लाह की बड़ाई और वहदानियत और रसूल (स0) की रिसालत के एलान के साथ हमारी फतह का भी एलान करती रहेगी। □□□

बकिया.....हुसैन (अ0) और हम

हक़ बात मुँह से निकाल सकें। मसलहतें अबा क़बा की दामनगीर हैं, हक़ बोलने का फल जो दुनिया से मिला करता है फितना व फसाद का लक़ब देकर फितने व फसाद के ख़ौफ़ की आड़ लिये बैठे हैं।

हुसैन (अ0) की मज्लिस में मोटे-मोटे आँसुओं से रोने वालों और दोनों हाथों से मातम करने वालों के सामने मशहदे मुक़द्दस का वाक़ेआ भी हुआ, नजफ़े अशरफ़ का भी, जन्नतुलबकी की बर्बादी भी देख ली, इन्हीं हाथों को वाक़ेआत पर पर्दा डालते और पालीटिक्स की आड़ अवाड़ लगाते भी देखा गया।

हुसैन (अ0) के अन्सार ने हुसैन (अ0) से यह अहद किया था "चाहे कुछ हो जाए हम हुज़ूर का दामन न छोड़ेंगे" आज इसी क़ौम के लोग हुसैन (अ0) के "मातम दार" "चाहे कुछ हो जाए" के पुरज़ोर अलफाज़ के साथ हुकूमत से वफादारी का अहद बाँधते हैं। क्यों? आज हुकूमत व रिआया में हक़ नाहक़ की जंग हो रही है और हमारी क़ौम हमेशा से

हक़ की तरफ़दार रही है।

ज़माने से पस्त और गिरावट की तरफ़ जा रही क़ौम, जिसमें न कोई स्प़िट है, न अख़लाकी ज़ुराअत तो वह उस वक़्त तक नहीं सम्भल सकती जब तक हुसैन (अ0) की अज़ीमुलमरतबत कुर्बानी के मक़सद से आँख छुपाती रहेगी। हुसैन (अ0) का खून तेरी बुराइयों के दफ़्तर धोने के लिए नहीं बहाया गया है। हुसैन (अ0) की शहादत हमारी नजात का ज़रीआ बन गयी है। अक़ीदे की सेहत में कलाम नहीं लेकिन इस तरह नहीं कि चार आँसू बहाए और जन्नत ख़रीद ली। ऐसे लोग भी होंगे जिन्होंने हुसैन (अ0) के हुस्ने अमल की रौशनी में सही रास्ता मालूम कर लिया वह हुसैन (अ0) की शहादत के मक़सद को समझ गए, उन्होंने हुसैन (अ0) के अख़लाक़ की पैरवी की और हुसैन (अ0) की शहादत उनकी नजात का बाअिस हो गयी। हुसैन (अ0) ने यही चाहा था अब क़ौम जो कुछ समझे।

नज्म कहते हैं शहादत जिसको उर्फ़ आम में यह हुसैन इब्ने अली का क़ौम को पैग़ाम है

□□□

जवाजे ताजियादारी

मौलाना सैय्यद कल्बे जवाद नक्वी साहब किब्ला मद्दजिल्लहुशरीफ

कालल्लाहु सुब्हानहू व तआला : "वमन युअज़्ज़िमु शआइरल्लाहि फइन्नहा मन तकवल कुलूब"

किताबे इलाही के मुताबिक अल्लाह की निशानियों की ताज़ीम दिलों की पाकीज़गी की अलामत है बल्कि ऐने इबादत है।

दरअसल कुछ चीज़ों में खुद अपनी ज़ाती कोई अज़मत नहीं होती लेकिन वही एक मामूली सी चीज़ जब किसी अज़ीम और काबिले एहतेराम ज़ात या चीज़ की तरफ मन्सूब हो जाती है तो खुद उसमें भी अज़मत और इज़ज़त पैदा हो जाती है एक आम फहम मिसाल से बात को इस तरह से समझाया जा सकता है एक मामूली सूत और धागे से पैर के मोज़े बुनते हैं और उनकी कोई इज़ज़त नहीं होती अगर हमारा मोज़ा रखा हुआ हो और किसी का पैर पड़ जाए तो हमें कोई परवाह नहीं होगी लेकिन उसी सूत और धागे से हमारा कुर्ता बनता है अगर वह कहीं रखा हुआ हो और कोई उसे पैरों से रौंदे तो उधर कुर्ते पर शिकन पड़ी इधर हमारे माथे पर शिकन पड़ जाएँगी अचानक ज़बान से निकलेगा "देखकर नहीं चलते? क्या आखें नहीं हैं?" मोज़े पर किसी का पैर पड़ा हमने ध्यान भी न दिया लेकिन अगर कुर्ते या कमीस पर पड़ा तो हमें बुरा लग गया मगर लड़ाइ झगड़े की नौबत नहीं आयी लेकिन अगर कोई टोपी या सर की पगड़ी रखी हुई है और किसी ने ठोकर मार दी तो अगर एहसास हुआ कि जानबूझ कर मारी है तो लाठियाँ बंदूकें निकल आएँगी और मारने मरने के लिए

तैयार हो जाएँगे। यह सब क्यों हुआ? अगर जिस माद्दे से मोज़े और जुराबें बनीं हैं उसी से कुर्ता बना है और उसी से सर की पगड़ी, फिर हमारे रद्दे अमल में फर्क क्यों हुआ? दरअसल सिर्फ निस्बत के बदल जाने से हमारा रवैया बदल गया। मोज़ों को क्योंकि पैरों से निस्बत है और पैर नीचे हैं इसलिए कोई इज़ज़त नहीं लेकिन कुर्ते को क्योंकि सीने से निस्बत है लिहाज़ा शर्फ पैदा हो गया लेकिन पगड़ी को सर से निस्बत है इसलिए सर की बुलन्दी से उसे बुलन्दियाँ मिल गयीं। इसी मिसाल से साबित होता है कि कुछ चीज़ों में ज़ाती इज़ज़त न होते हुए भी सिर्फ बुलन्द से निस्बत की वजह से अज़मत पैदा हो जाती है। दूसरी इससे बेहतर मिसाल यह हो सकती है कि ईंट, गारा, पत्थरों से हमने एक मकान बनाया और कहा कि यह हमारा मकान है तो कोई शर्फ पैदा नहीं हुआ लेकिन अगर उसी मसाले से एक दूसरा मकान बनाया, ईंटे भी वही हैं मसाला भी वही मुमकिन है मज़दूर और कारीगर भी वही हो लेकिन जब मकान बन के तैयार हुआ तो हमने कहा यह अल्लाह का घर है। मस्जिद से तो अहकाम बदल गए अब हालते नजासत में दाखिल नहीं हो सकते दाखिल हों तो दो रकात नमाज़े तहय्या मस्जिद में पढ़ें, जूते चप्पलें बाहर उतारें, दुनियावी गुफ्तगू मना है। सवाल यह है कि किस चीज़ ने यह फर्क पैदा कर दिया? अगर ग़ौर कीजिए तो सब कुछ वही है सिर्फ निस्बत बदल गयी क्योंकि अब निस्बत अल्लाह की तरफ है। इसलिए ज़मीन व आसमान का फर्क पैदा

हो गया। काबा भी उन्हीं पत्थरों से बना जिन से अरब के सब मकान बन रहे थे लेकिन जब इस घर को अल्लाह ने फरमाया मेरा घर है तो शर्फ इतना बढ़ा कि अम्बिया और अइम्मा के सर भी उसकी तरफ झुक रहे हैं। यह फर्क इसलिए हुआ कि मस्जिद बनायी तो हमने कहा यह अल्लाह का घर है खुद अल्लाह ने आकर नहीं फरमाया कि यह मेरा घर है लेकिन काबा के लिए जब लिसाने कुदरत ने खुद एलान किया कि यह मेरा घर है तो शर्फ की हद ही न रही।

तीसरी मिसाल यह दी जा सकती है कि आय-ए-मेराज में अल्लाह तआला ने इरशाद फरमाया : "सुब्हानल्लजी असरा बिअब्दिही" ले गया परवरदिगार अपने बन्दे को। इस सिलसिले में कहा गया कि अगर बन्दा कहा तो कौन सा शर्फ पैदा हो गया? सब ही अल्लाह के बन्दे हैं लेकिन गौर किया जाए तो बहुत फर्क है। हमारा अपनी ज़बान से कहना कि हम अल्लाह के बन्दे हैं यह और है और खुद लिसाने कुदरत किसी को मुहब्बत से कह दे मेरा बन्दा, तो बन्दगी को मेराज मिल जाती है। दूसरा फर्क यह है कि काबे में खुद अपने जाती फ़ज़ाएल न थे लेकिन जब अल्लाह ने उसे अपनी तरफ मन्सूब किया तो बहुत अज़मत बढ़ी मगर ज़मीन ही तक रहा लेकिन खुद रसूल (स0) में जाती फ़ज़ाएल भी मौजूद थे इसीलिए जब अल्लाह ने अपनी तरफ मन्सूब किया तो "काबा क़ौसैन औ अदना" की मन्ज़िल तक पहुँच गये।

इन मिसालों से पता चला कि निस्बत की बड़ी अहमियत है। यह न देखिये किस चीज़ से है यह देखिये निस्बत किसकी तरफ है अब यह न कहिये कि ताज़िये को क्यों चूमते हो अलम के

फ़रहरे की इतनी ताज़ीम क्यों है? यह तो मामूली कागज़ और बाँस की तीलियों से बने हैं, अलम का फ़रहरा आम कपड़े का बना हुआ है मैं कहता हूँ कि यह देखो निस्बत किसकी तरफ है। ताज़िये को निस्बत है रौज़-ए-इमामे हुसैन (अ0) की तरफ और अलम मन्सूब है अब्बासे अलमदार (अ0) से। इसी निस्बत से अज़मत पैदा हुई जिसने उन्हें सर पर रखने और आँखों से लगाने के लाएक बना दिया।

ताज़िया बनाने की हुस्मत के सिलसिले में अमीरुलमोमिनीन हज़रत अली (अ0) का एक कौल पेश किया जाता है : "मन जदददा क़ब्रन औ मस्सल मिसालन फक़द ख़रज मिनल इस्लाम।" तो यहाँ मस्सल मिसालन से किसी जानदार की तस्वीर या मूरती बनाना मुराद है वरना एक लिबास को सामने रखकर दूसरा लिबास बनाना हराम हो जाता और एक मकान के माडल को सामने रख कर वैसा ही दूसरा मकान बनाना नाजाएज़ हो जाता, मोलवी साहब को अपनी शेरवानी या क़बा दर्जी के यहाँ नमूने के तौर पर भिजवाना बिदअत क़रार दिया जाता।

हाशिया बुख़ारी पर अल्लाम नूवी तहरीर करते हैं....."हमारे अस्हाब और दूसरे उलमा का कौल है हैवान की तस्वीर बनाना शदीद हराम है क्योंकि इसमें खुदा की मख़लूक से मुशाबेहत होती है लेकिन पेड़, ऊँट का कजावा या किसी ग़ैरे रूह की तस्वीर बनाना हराम नहीं है। इस तरह किसी ग़ैरे ज़ीरूह की तस्वीर रखना भी जाएज़ है।"

(हाशिया बुख़ारी जिल्द-2 पारह-28 पेज-880

मतबूआ निज़ामी, कानपुर)

अगरचे तिरमिज़ी शरीफ की एक रिवायत

से यह जाहिर होता है कि ज़ीरुह की शबीह बनाना भी जाएज़ है : "हज़रत आएशा फरमाती हैं कि जिब्रईल (अ०) मेरी तस्वीर एक रेशमी टुकड़े पर लाए और रसूल (स०) से कहा कि यह दुनिया और आख़रत में आपकी बीवी हैं।"

(जामे तिरमिज़ी जिल्द-2 पेज-228)

इसी तरह से सही बुख़ारी, सही मुस्लिम, सुनने अबुदाऊद, सुनने इब्ने माजा में रिवायत मौजूद है कि हज़रत आएशा के पास गुड़ियाँ मौजूद थीं जिनसे वह खेलती थीं। रसूल (स०) ने उन्हें देखा मगर मना नहीं किया। इसी तरह से हज़रत आएशा के पास एक घोड़े की मूर्ती भी थी जिसमें पर लगे हुए थे। रसूल (स०) ने देखा तो मुस्क्राने लगे और मना नहीं फरमाया।

(सुनने अबुदाऊद जिल्द-2 पेज-294)

कुर्आन मजीद में जनाबे सुलेमान (अ०) पैग़म्बर के लिए मौजूद है : "यअमलून लहू मा यशाउ मिन महारीबिवं व तमासीलिवं व जिफानिन कलजवाबि व कुदूरिरासियात"

(सूर-ए-सबा आयत-13)

अल्लामा बैज़ावी, जारुल्लाह ज़मख़शरी, जलालुद्दीन सुयूती वगैरा बड़े-बड़े मुफ़स्सिरीन ने लिखा है कि यह असल में अम्बिया और फरिश्तों की तस्वीरें थीं और उनका मक़सद यह था कि इनको देखकर लोग ज़्यादा इबादत करें।

इस बात से यह नतीजा निकला है कि जिन चीज़ों से इताअत और इबादते इलाही का शौक पैदा हो उनकी शबीहें बनाना कुर्आन की रू से जाएज़ है जबकि खुद उन चीज़ों की इबादत ख़याल में न हो। तो हम कब ताज़िये, अलम या जुलजिनाह की इबादत करते हैं? बल्कि यह

तमाम चीज़ें निशानियाँ हैं उन कुर्बानियों की जो अल्लाह के रास्ते में दी गयीं जिनसे हकीक़त में इताअते इलाही और अल्लाह के रास्ते में कुर्बानी का जज़्बा जागता है।

काबा खुद बैठे मअमूर की शबीह है। इसी तरह हज के बहुत से अरकान जनाबे इब्राहीम व इस्माईल व जनाबे हाजरा के आमाल की शबीहें हैं। यह हरवला क्या है? जिस में एक ख़ातून की पैरवी में बड़े-बड़े जवाँ मर्द दौड़ते हुए चल रहे हैं दूसरे लफ़्ज़ों में अल्लाह की राह में एक माँ की कुर्बानी की शबीह बने हुए हैं तो अगर हम जनाबे अब्बास का अलम उठा रहे हैं जो एक अज़ीम वफ़ादार की कुर्बानी की यादगार है तो क्या हर्ज है? अब सवाल यह है कि यह कैसे साबित हो कि सारे तबररुकाते अल्लाह की निशानियाँ हैं। इसका जवाब यह है कि कुर्आन मजीद में इरशाद है : "वलबुदन जअलनाहा लकुम मिन शआरिल्लाह" हमने कुर्बानी के ऊँटों को तुम्हारे लिए अल्लाह की निशानियाँ करार दिया है। शआएर बहुवचन है शआीरा की और शआीरा उस चीज़ को कहते हैं जो किसी की याद दिलाए या किसी चीज़ की निशानी हो। क्योंकि यह जानवर उस अज़ीम कुर्बानी की याद दिलाते हैं जो जनाबे इब्राहीम (अ०) और जनाबे इस्माईल (अ०) ने मिना में पेश फरमायी इसी तरह तबररुकाते अज़ादारी उस कुर्बानी की याद दिलाते हैं जो फख़रे इब्राहीम (अ०) और इस्माईल (अ०) इमामे हुसैन (अ०) ने कर्बला की सरज़मीन पर पेश फरमायी।



जनाबे जैनब का जुल्म-तोड़

जवाब

मु० २० आबिद

अन्धी शाम.....अन्धड़ों की राजधानी.
.....अन्धेर का अन्धेरा दरबार.....बरसाती
कीड़ों से बजबजाती चौपाटी,

चौपट राजा.....झूठ के नशे में
धुत्त, बेसुध, पापों से चकनाचूर जुल्म का
गुरुघन्टाल, अत्याचार अनर्थ करते करते थका
हारा, लूला लंगड़ा, काला-कलूटा, किस्मत
फूटा.....,

और सामने रस्सी में जकड़ा मानवता,
शराफ़त, सचाई का लुटा हुआ काफ़ला, रौशनियों
का रखवाला, धर्म का पालनहारा.....,

हवाएँ थमी हुई, सुनसानियाँ छायी हुयीं,
Nature उदास, धुवाँ-धुवाँ.....काली गद्दी
से नशीली आवाज़ गुँजती है.....धर्म
ईमान की खिल्ली उड़ाती, इन्सानियत की हंसी
उड़ाती, हंस की चाल दिखाती..... तो,

घुटन बढ़ चुकी है, न्याय सिसक रहा
है..... कहीं आसमान फट न पड़े.....

.....कहीं ज़मीन धंस न जाये.....
कहीं क़यामत न आ जाये.....

ऐसे में एक जियाली ललकार बढ़कर
ताक़त की कलाई मरोड़ देती है, (धर्म के जान
में जान आती है, और इन्सानियत के साँस में
साँस).....

पहचाना! ललकार कौन है? वही सच्चे
रसूल की अमानतदार नवासी, इस्लाम और
रसूल के उसूलों की रखवाली जैनब अली की

ज़बान में, माँ की शान से, दादा की आन से
बोल रही है:-

सारी हम्द, संस्तुति, तारीफ़ संसारों के
पालने वाले अल्लाह के लिए है। उसके भेजे हुए
रसूल और उनकी आल पर सलवात। खुदा ने
सच कहा है, "फिर जो बुराई करते थे, खुदा की
निशानियों (प्रतीकों) को झुटलाते थे और उनकी
खिल्ली उड़ाते थे उनका बुरा ही अन्जाम हुआ।"
ऐ यज़ीद, तू किस हवा में है? तूने हम पर ज़मीन
के रास्ते और आसमान के फैलाव बन्द कर दिये,
हम औरतों को बन्दी कर फिराया, तो क्या तू इस
ख़याल में है कि हम खुदा के नज़दीक ज़लील हो
गये और तू उसके नज़दीक बड़ा हो गया। तूने
जो हम पर यह जुल्म ढाया तो क्या सोचता है कि
तुझे उसके आगे शान और ऊँचाई मिल गयी!! तू
इस फेर में घमंडी की तरह घूर रहा है, खुशी से
बाहें मटका रहा है, इतरा-इतरा कर ट्विस्ट
(Twist) कर रहा है। तू इस बात पर फूले नहीं
समाता कि तूने दुनिया को अपने लिए बराबर कर
लिया है, अपने काम ठीक कर लिये हैं और तुझे
हमारी राजसत्ता बेखटके मिल गयी है। जल्दी
न कर, ज़रा दम तो ले। क्या तू यह भूल गया
है कि खुदा (कुर्आन मजीद में) कहता है कि
"यह हरगिज़ न सोचो कि मैंने काफ़िरों को
मुहलत दे दी है, और उन्हें जो कुछ यह ढील है
वह भली है, बल्कि हम उस गुट को लम्बे समय
तक छोड़ रखते हैं ताकि उनका गुनाह और बढ़े

और उनके लिए तो नीचा ज़लील करने वाला अज़ाब है। (3-175)

ऐ तुलका⁽¹⁾ (छोड़े गये दास/गुलाम) की औलाद! क्या यही तेरा न्याय इन्साफ है कि तूने अपनी औरतों और (यहाँ तक) अपनी लौंडियों को पर्दे में रखा और रसूल की बेटियों को बन्दी बनाकर घुमाया, उनका मान मिटाया, उन्हें बेपर्दा कर दिया। उन्हें दुश्मनों ने एक शहर से दूसरे शहर फिराया है। लोग उनके चेहरों को देखते हैं और पास व दूर के शरीफ व कमीने (ऐरे-गैरे) लोग उनके गालों को घूर-घूर कर तकते हैं, उस पर यह मुसीबत यह है कि इन बेचारों के आड़े आने वाला कोई रखवाला मर्द भी नहीं है। हाँ, उससे रियायत की क्या उम्मीद की जाय जिसके पुरखों⁽²⁾ के मुँह ने पाक लोगों का जिगर चबा के थूका हो और जिसकी खाल, गोश्त, शहीदों के खून से पली-पोसी हो!! क्यों यह हालत न हों! जो हमें बैर, नफ़रत जलन से देखता है, वह बैर करने में क्यों कमी करेगा। ऐ यज़ीद फिर तू गुनाह और बड़े मामले की परवाह न करके अपने पुरखों को याद करके कह रहा है कि वे मेरे पास आकर यह मन्ज़र देखकर खुशी से उछल पड़ते और कह उठते कि ए यज़ीद तेरा हाथ कभी न शल (बेकार) हो" जबकि तू जन्नत के जवानों के सरदार इमाम हुसैन (अ0) के दाँतों से बेअदबी कर रहा। ऐ यज़ीद! तू क्यों न खुश हो और ऐसी बातें क्यों न कहें क्योंकि तूने घाव को गहरा कर दिया है और पाक पौधे को जड़ से उखाड़ फेंका है यानी मुहम्मद (स0) की पाक औलाद का खून बहाया है। और मुहम्मद (स0) की आल (औलाद) और अब्दुलमुत्तलिब की सन्तान के उन लोगों को जो

ज़मीन पर तारों के समान थे मार डाला है और अपने पुरखों को इस पर पुकारता है। बस तू बहुत जल्दी उनसे मिल जायेगा। और उस समय तू आरजू करेगा कि काश! दुनिया में तेरे हाथ ही न होते और न ही तेरी ज़बान कि जो कुछ किया न करता और जो कुछ कहा न कहता। फिर जनाबे ज़ैनब ने आसमान की ओर मुँह उठाकर कहा:- मेरे खुदा! हमारे हक़ का बदला ज़ालिमों से ले और हम पर सितम करने वालों से तू ही खुद बदला ले। जिस जिस ने हमारा खून बहाया, और हमारे जवानों को मार डाला उस उस पर अपना ग़ज़ब (प्रकोप) ढा। ऐ यज़ीद, खुदा की कसम जो तूने बेइन्साफी की (और बुरा किया है) वह अपने ही साथ किया, तूने अपनी ही खाल फाड़ी है और अपना ही गोश्त काटा है। तू रसूल (स0) के सामने मुजरिम की तरह लाया जायगा कि तूने उनकी सन्तान का खून बहाया है और उनकी औलाद का मान मिटाया है। उस समय खुदा उनकी परेशानी को दूर कर देगा, उनकी बेकली को सुकून चैन में बदल देगा और सताने वालों से उनका बदला लेगा। तू यह हरगिज़ न सोच कि खुदा के रास्ते में मारे जाने वाले मुर्दा हैं बल्कि वे ज़िन्दा हैं और अपने पालने वालो से रोज़ी जीविका पाते हैं।⁽³⁾ और फिर खुदा का इन्साफ (जजी) करना, रसूल (स0) की दावेदारी और जिब्रईल की पैरोकारी तेरी सज़ा के लिए काफी है। जिसने तेरे राज़ को बराबर किया और तुझे मुसलमानों के सरों पर थोपा वह जल्दी ही जान जायगा कि ज़ालिमों का (खोट करने वालों का) का क्या बुरा बदला मिलता है और तुम लोगों में किसका ठिकाना बुरा है और किसके साथी और

कुमक करने वाले कमज़ोर और हल्के (बेकार) हैं। और हालाँकि इस जीवटपन और बेबाकी से तेरे मुँह लगना मुझको खुद दुख दे रहा है, सता रहा है फिर भी मैं तो तुझे तुच्छ, कम्बख्त ही समझती हूँ और जो तू हमें सता रहा है और बुरा बर्ताव कर रहा है उसे बहुत बड़ा समझती हूँ। दुख है कि आँखें रोती हैं और सीने दुख से भुन रहे हैं। हैरत है खुदा का दल शैतान के हाथों मार डाला गया, दुश्मनों के हाथों से हमारा खून अब तक टपक रहा है और उनके मुँह से हमारे गोश्त की बिसान्द आ रही है, और जंगली भेड़िये उन पाक जिस्मों पर मण्डला रहे हैं। ऐ यज़ीद! अगर हमें उजाड़ने में ही तूने ग़नीमत (लूट का माल) पाया है, तो कल क़यामत के दिन तू सिर से घाटे में पड़ेगा जब अपने बुरे कामों को छोड़ कर तेरे हाथ कुछ न लगेगा। खुदा (अपने) बन्दों पर जुल्म नहीं करता। खुदा से ही शिकायत फरयाद है और उसी पर भरोसा है। ऐ यज़ीद! जितना छल मक्कारी करना चाहे कर ले और अपने जतन से बाज़ न आ और जितना सताना है सता डाल लेकिन खुदा की कसम तू हमारी याद हमारी चर्चा को मिटा नहीं सकता और न ही तू अपनी बदनामी को धो सकता है। तेरी राय, तेरी सोच तो बस फुसफुसी और ढीली है, तेरे दिन तो बस गिनती के हैं। तेरी पूँजी उस दिन तो परेशानी बेचैनी के सिवा कुछ न होगी जब पुकारने वाला आवाज़ लगायगा, "हाँ हाँ ज़ालिमों पर खुदा की लानत (फिटकार-धितकार)"।

खुदा की तारीफ है (शुक्र है) जिसने हमारे पहले पर भलाई और हमारे आख़री पर शहादत की मुहर लगायी (यानी उन पर ख़त्म कर दी)। मैं खुदा से यह दुआ माँगती हूँ कि उनका (हमारे शहीदों) का सवाब पुण्य पूरा कर और उनके बदले को बढ़ा दे (भाव बढ़ा दे)। हम में जो (ज़िन्दा) बच रहे उन का भला कर। वह तो दया वाला, मेहरबान और चाहने वाला है। हमें तो अल्लाह ही काफी है जो अच्छा वकील है।

और फिर चारों ओर हू का सन्नाटा छा गया.....

अन्धेर नगरी का चौपट राजा चौपाट (Flat) हो चुका, चुप्पी साध चुका था.....

सितम के थके हारे हाथों में हथकड़ियाँ पड़ चुकी थी.....

पापों के पैरों तले से ज़मीन निकल चुकी थी.....

जुल्म की नींव खोखली हो रही थी इतराता हुआ घमण्ड सिस्कियाँ ले रहा था.....

और करता भी क्या?

नाचते इतराते अन्धरे की धज्जियाँ उड़ रही थी।

और.....

सच सच्चाई चैन की चादर तान चुकी थी।

नबियों की मेहनतें दुआएँ दे रही थी।

इस्लाम के माथे का पसीना शाबाशी दे रहा था।

- (1) रसूल (स0) ने मक्का जीतने के दिन यज़ीद के दादा अबुसुफयान को यह कहकर छोड़ दिया था कि जाओ तुम अब छोड़े गये गुलाम हो।
- (2) यज़ीद की दादी ने बद की लड़ाई में होने वाले शहीद जनाब हमज़ा (रसूल स0 के चचा) का जिगर चबाया था।
- (3) कुर्आन मजीद

ख़ानदाने इज्तेहाद और अज़ादारी

सै० मुस्तफ़ा हुसैन नक्वी 'असीफ जायसी'

अनुवादक : काज़िम महदी नगरौरी

हज़रत आदम (अ०) ने जब से ज़मीन पर क़दम रखा तब ही से ज़मीन पर ज़िक्रे इमामे हुसैन (अ०) और उनके मसाएब पर आहो बुका का सिलसिला शुरू हो गया उसके बाद जितने भी अम्बिया-ए-किराम दुनिया में हिदायते इन्सानी के लिए आए उन्हें ज़िन्दगी के किसी न किसी मोड़ पर ज़िबर्ईल के ज़रिए हुसैन (अ०) मज़लूम की अज़ीम कुर्बानी व मुसीबत की तरफ ज़रूर ध्यान दिलाया गया और उन्होंने मुस्तक़बिल की उस बड़ी मुसीबत पर गिरिया करके बताया कि मुसीबत पर गिरिया बिदअत नहीं बल्कि मज़लूम का तज़किरा इन्क़िलाब का बाअिस और ज़ालिमों की शर्मिन्दगी और जुल्म के ख़ात्मे का सबब है शायद इसी लिए शायर कहता है :-

“नार-ए-इन्क़िलाब है मातमे रफ़्तगाँ नहीं”

और अगर कभी किसी फ़ितरत के दुश्मन ने कह भी दिया कि:-

“वह रोएं जो कातिल है ममाते शोहदा के

हम ज़िन्द-ए-जावेद का मातम नहीं करते”

तो फ़ौरन ख़ानदाने इज्तेहाद का रुकने रकीन अपने आबाई फरीजे के तहत ऐसी सोच रखने वालों को सिर्फ़ ख़ामोश ही नहीं करता बल्कि हमेशा के लिए दावते फ़िक्र भी यह कहकर दे देता है कि :-

क्या रोओगे उनको जो हलाके अबदी हैं

क्यों ज़िन्द-ए-जावेद का मातम नहीं करते”

(सैय्यदुल उलमा)

अदीबे आज़म मौलाना सैय्यद मुहम्मद

बाकिर शम्स अपनी किताब “हिन्दुस्तान में शीअियत की तारीख़” में लिखते हैं :-

“ताज़ियादारी का वजूद हिन्दुस्तान में बहुत पहले से था। दक्षिण में आशूरख़ाना, सिंध में इमाम बारगाह थी। उत्तरी भारत में फूस और कपड़े के इमामबाड़े मुहर्रम में बनते थे। दस दिन के लिए पक्की इमारत की क्या ज़रूरत थी। रुलाने वाली नज़में अकेले और चन्द आदमी मिलके राग से पढ़ते थे। मौजूदा ज़माने की सोज़ख़ानी उसी की यादगार है, इससे सिर्फ़ सवाब हासिल करने के और कोई फाएदा न था। वह भी जबकि शरअी हद के अन्दर हो, जुलूस भी निकलते थे जिनमें शहनाई, रौशन चौकी, तबल, ताशा, झाँझ बजते और माही मरातिब (मछली और चौपायों के सर चाँदी और पीतल के बाँसों पर लगे हुए) के साथ बुराक और गुम्बद ताज़ियों की जगह होते थे, कुछ-कुछ दूर पर ठहर-ठहर के बाँक और पटे को दिखाते और या हुसैन (अ०) की आवाज़ बुलन्द करते। उन रस्मों के बजा लाने में सारे मुसलमान एक ही तरह शरीक थे।

गुफ़रानमआब (रह०) ने रौशन चौकी और शहनाई को गाने-बजाने के आले होने की वजह से हराम और तबल को जंगी बाजा होने की वजह से जाएज़ करार दिया, झाँझियों और माही मरातिब के बदले अलम, गुम्बद की जगह ताज़िये और बाँक और पटे का फन दिखाने के बजाए सीनाज़नी और हुसैन (अ०) हुसैन (अ०) को रिवाज दिया।

हाज़री, मेहंदी और नज़र व नियाज़ ऐसी

रस्में काएम कीं, मुहर्रम के दस दिन में हर दिन एक शहीद के ज़िक्र से ख़ास किया। मजलिसों में इराक़ की रौज़ा ख़्वानी के तरीक़े पर जाकरी शुरु की। जिसमें अहलेबैत अलैहिमुस्सलाम के फ़ज़ाएल में हदीसों भी मसाएब के साथ बयान की जाने लगीं। इस तरह मजलिस की इफ़ादियत बढ़ गयी और उसमें तबलीगी पहलू पैदा हो गया। और इन रस्मों को इतना आम कर दिया कि घर-घर मजलिस और गली-गली ताज़िये उठने लगे। इस तरह उन्होंने शीओं की ताज़ियादारी को एक नयी शक़ल देकर आम मुसलमानों से अलग कर दिया। और इससे मज़हबी तबलीग़, क़ौमी तनज़ीम और शीओ तमद्दुन की तश्कील की।

इस सिलसिले में एक कमी जो इराक़ व ईरान में है उन्होंने यहाँ उसको पूरा किया। इराक़ व ईरान के उलमा मजालिसें पढ़ना अपनी शान और मर्तबे के ख़िलाफ़ समझते हैं, इसका नतीजा यह हुआ कि जाकरी जिसे वहाँ रौज़ा ख़्वानी कहते हैं कम पढ़े लिखे लोगों का काम रह गया। और उसमें कोई तरक्की न हो सकी। हिन्दुस्तान में मजालिसों में मरसिया पढ़ा जाता था। उनका ख़याल था कि मजलिस शाएराना कमाल दिखाने की जगह नहीं है इसमें फ़ज़ाएल व मसाएबे अहलेबैत (अ०) बयान होना चाहियें। उन्होंने वाक़ेआते कर्बला पर मोतबर रिवायतों का एक बड़ा ज़ख़ीरा "इसारतुल अहज़ान" के नाम से पेश किया। और आशूर के दिन अस्त्र के बाद खुद मजलिस पढ़ने की शुरुआत की, इस तरह हिन्दुस्तान के उलमा में उन्होंने यह सुन्नत काएम की कि उनके बाद उनके जानशीन यह मजालिस पढ़ते रहे। आज भी यह मजलिस उसी वक़्त उनके इमामबाड़े में होती है। अब यहाँ के उलमा को जो हकीक़त में उन्हीं की औलाद थे, इस पर एतराज़ और इससे बचाव की क्या हिम्मत हो सकती थी।

नतीजा यह हुआ कि कस्सत से उलमा मजालिसें पढ़ने लगे।"

हज़रत गुफ़रानमआब ने ग़लत रसमों को मिटाकर कर अज़ाए सैय्यदुश्शोहदा (अ०) को शरओ निज़ाम के साथ फ़रोग़ दिया। साथ ही अकसर इमामबाड़ों से पहले अपने हाथ से अज़ाख़ान-ए-हुसैनी का संगे बुनियाद रखा। और पहले पहल मजालिस की बुनियाद रखी बल्कि हज़रत सुलतानुल उलमा रिज़वानमआब को इजाज़-ए-इज्तेहाद व वसीयतनामे में अज़ादारी में मसरूफ़ रहने की वसीयत भी फरमायी। (तर्जुमा अरबी इबारत) "यानी ऐ फ़र्ज़न्द! मैं तुम्हें जनाबे सैय्यदुश्शोहदा ख़ामिसे आले अबा सिब्ते रसूलुस्सक़लैन हज़रत इमाम हुसैन (अ०) की जाँसोज़ मुसीबत पर रोने, पीटने की वसीयत करता हूँ ख़ास तौर से उस ज़माने में जबकि उनके सर क़लम किये गये, उनके छोटे-छोटे बच्चे ज़िबह किये गये। उनके हरमे मोहतरम क़ैद किये गये और कूचे व बाज़ार में उनकी तौहीन की गयी।"

हज़रत गुफ़रानमआब ने 1200 हिजरी से लखनऊ को मरकज़ बनाकर तमाम हिन्दुस्तान में जिस तरह शीओयत की तबलीग़ व इशाअत का काम अन्जाम दिया उसी तरह अज़ादारी को फैलाने और उसके असर और फाएदे को बढ़ाने में अपनी निगाह जमाए रखी। इसलिए आप ने एक अज़ाख़ाना अपने वतन नसीराबाद में बनवाया और फिर दूसरा अज़ाख़ाना 1227 हिजरी में लखनऊ में बनवाया जिसके साथ एक मस्जिद भी तामीर फरमायी।

शम्स लखनवी लिखते हैं कि :- "गुफ़रानमआब ने मजालिसों के मुनअक़िद करने पर ज़ोर दिया खुद भी इमामबाड़ा बनवाया और उसको सामाने आराइश से भरने के बजाए मजलिसों का एहतेमाम किया और हदीसख़्वानी पर ज़्यादा ध्यान दिया।"

हुसैनिया-ए-गुफ़रानमआब की तामीर और मजलिस को तक्रीबन दो सौ साल पूरे होने को हैं। इसके पहले ज़ाकिर खुद गुफ़रानमआब (रह0) हैं, दूसरे ज़ाकिर आपके बड़े बेटे हैं जो अवध में हुकूमते शरअिया की बुनियाद रखने वाले भी हैं और जिन्होंने दीनदारी और अज़ादारी को और ज़्यादा बढ़ाया। सुलतानुल उलमा नव्वरल्लाहु मरक़दहू अस्मै आशूर को मिम्बर पर नंगे सर तश्रीफ़ ले जाकर मसाएब का तज़किरा फरमाते थे जिनके कुछ जुमले मजलिस में कोहराम मचा देते थे। सुलतानुल उलमा के बाद मलिकुल उलमा मग़फ़िरतमआब ने यह सुन्नत कायम रखी उनके बाद मलाजुलउलमा मौलाना सैय्यद अबुलहसन उर्फ़ बच्छन साहब किब्ला इस अस्म की मजलिस को अपने इन्तिहाई असर वाले अन्दाज़ में पढ़ते रहे और फिर बहरुलउलूम मौलाना सैय्यद मुहम्मद हुसैन उर्फ़ अल्लन साहब किब्ला तो एक मुजतहिदाना रंगे ज़ाकिरी के बानी हुए जिनके बाद से वह फ़र्क़ जो उलमा व ज़ाक़रीन के बीच था, बहुत हद तक ख़त्म हो गया। मौलाना शम्स लिखते हैं कि :- "बहरुलउलूम ने ज़ाकिरी के फन में इंक़लाब पैदा किया। हदीस व तफ़सीर और फलसफ़ियाना मूशिगाफ़ियों से तक्रीर को इल्मी बनाकर मौजूदा ज़ाक़री के अन्दाज़ के ईजाद करने वाले हुए।" बहरुलउलूम के ईजाद किए हुए ज़ाक़री के अन्दाज़ को ख़ानदाने इज्तेहाद से मुताल्लिक ज़ाकिर, ख़तीबे आज़म अल्लामा सैय्यद सिब्वे हसन नक़वी फातिर जाएसी ने आसमान पर पहुँचा दिया। और ख़तीबे आज़म ज़ाक़री के अहदे शबाब ही में "ज़ाकिर शामे ग़रीबों" के लक़ब से सज कर उमदतुलउलमा मौलाना सैय्यद कल्बे हुसैन नक़वी मुजतहिद ने ज़ाक़री शुरू की। और कुछ ही अरसे में आलमी शोहरत के मालिक ज़ाकिर हो गये।

उमदतुलउलमा ने तक्रीबन साठ साल ज़िक़्रे फ़ज़ाएल व मसाएबे अहलेबैत (अ0) बयान फरमाए और 1926 ई0 से आख़िर ज़िन्दगी तक दुनिया भर में सुनी जाने वाली मजलिसे शामे ग़रीबों पढ़ी। हयातुल्लाह अन्सारी का बयान है कि :- "उन्हें अलफाज़ के पैकर सजाने के साथ उनको जज़्बात की रुह अता करने का भी सलीका था।"

साहेबे मतलउल अनवार तहरीर फरमाते हैं कि "मौलाना कल्बे हुसैन साहब को खुदा ने कुव्वते बयान और ख़िताबत का मलका अता किया था इसलिए मिम्बर को ज़ीनत बरख़्शी और दिनबदिन तरक्की करते गए। मुताला और मेहनत से अपने बुजुर्गों के सामने शोहरत और नामवरी के मदरिजे आलिया तै किए। हर अन्जुमन उन्हें अपना सरपरस्त जानती थी। बर्रे सगीर के हर गोशे तक उनकी आवाज़ पहुँचती थी। शीआ एजीटेशन में उनकी क़ैद और सुन्नी शीआ स्टेज पर उनकी तक्रीर, शीओं की लीडरी और सुन्नियों से इत्तेहाद उनकी शख़्सियत का रौशन पहलू है। इन सिफ़ात ने उन्हें हैरतअंगेज़ महबूबियत बरख़्शी थी। जनाब नज्मुल मिल्लत और नासिरुल मिल्लत के बाद मरजेईयत में उनकी ज़ात अकेली हो गयी थी। उनकी सबसे बड़ी मसरुफ़ियत मजलिसें थीं। वह बर्रे सगीर के गोशे-गोशे में पहुँचे मगर जुमे के दिन आसिफ़ुद्दौला की मसजिद में नमाज़ हर हाल में अदा की। मुहर्रम में अश्र-ए-मजलिस की गिनती दुश्वार है लेकिन गुफ़रानमआब के इमामबाड़े और छोटी रानी के अज़ाख़ान-ए-इक़बाल मंज़िल की मजलिसें यादगार थीं। ख़िताबत में उनका तरीक़ा बहुत दिलक़श था। उनका लहजा नर्म, अन्दाज़े बयाँ सादा, ज़बान साफ़ और मीठी, मतलब लतीफ़ और आम फ़हेम और आलेमाना कौसर की रवानी, सलसबील का बहाव, मिम्बर

का वकार और आवाज़ का धीमापन, न चीख न पुकार, न दबी हुई सदा, हज़ारों की भीड़ मगर दूर-दूर तक आवाज़ पहुँच रही है। आवाज़ के साथ सुनने वालों का ज़हन हाज़िर, दुरुद व दाद, गिरया व फरयाद, जब चाहा रुला दिया फिर मसाएब में न बनावट न फ़ज़ाएल में शोर। यह मालूम होता था जैसे समुन्द्र की सतह पर हवा के झोंके हल्की-हल्की मौज पैदा कर रहे हैं।"

ख़तीबे आजम के अहद में ख़ानदाने इज्तेहाद के एक और बड़े मुहक्क़ यानी हकीमुल उम्मत अल्लाम-ए-हिन्दी सैय्यद अहमद नक़वी मुजतहिद भी अपने इल्म व फन्ने ख़िताबत से ज़माने को फाएदा पहुँचा रहे थे और कुछ वक़्त के बाद तो सैय्यदुल उलमा अल्लामा सैय्यद अली नक़ी नक़वी साहेब किब्ला ने कमाले एहतियात व तहकीक़ से ज़ाकरी को मेराज ही अता कर दी।

अल्लामा सैय्यद सईद अख़्तर गोपालपुरी "खुर्शीदे ख़ावर" में लिखते हैं कि :- "सैय्यदुलउलमा की ख़िताबत का एक ख़ास रंग था। जो इबारात सजाने और सस्ती नुक्ता आफरीनी के बजाए इल्म और तहकीक़ पर मबनी था और एक घण्टे की मजलिस में हकाएक़ व मआरिफ़ के कितने दरवाज़े खुल जाते थे। उनकी तक़रीर व तहरीरमें बहुत कम फर्क़ होता था। दूसरी ख़ास बात उनकी तक़रीरों में यह थी कि हर मज़हब व मिल्लत का मानने वाला उसे दिली सुकून के साथ सुन सकता था और फाएदा उठा सकता था। किसी जुमले से किसी के दिल दुखाने का ख़तरा नहीं था।"

और इसी दौरे तहकीक़ व तबलीग़ में ज़ाकिरे शामे ग़रीबाँ उमदतुल उलमा के दो बेटों यानी आकाए शरीअत सफ़वतुल उलमा मौलाना सैय्यद कल्बे आबिद नक़वी इमामे जुमा लखनऊ ताबा सराह और मुफ़किरे इस्लाम डाक्टर सैय्यद कल्बे सादिक़ साहब किब्ला ने भी तबलीगे दीन के साथ अज़ादारी के फैलाने के

लिए ज़ाकरी का सहारा लिया और हद है कि सफ़वतुलउलमा ने अज़ा के ही काम में शरबते शहादत भी नोश फरमा लिया।

ख़ानदाने इज्तेहाद के तमाम लोगों के घर-घर अज़ाख़ाने हैं ही लेकिन साल भर के लिए ज़ियारतगाहे आम व ख़ास की हैसियत जिन अज़ाख़ानों को हासिल है वह हुसैनिय-ए-गुफ़रान मआब के अलावा, हुसैनिय-ए-जन्नतमआब, हुसैननिया-ए-मौलाना अली नक़ी और कर्बलाए मेहदी मुनसिफ़ुद्दौला की तामीर करायी हुई हैं। ख़ानदाने इज्तेहाद के जिन तारीख़साज़ ज़ाकिरों का पिछली सतरों में ज़िक़रेख़ैर हुआ है उनके अलावा भी हर अहद में बाकमाल ज़ाक़ेरीन व वाएज़ीन, मरसिया गोयान व मरसिया ख़ानान हज़रात की एक अच्छी ख़ासी तादाद थी और खुदा का शुक्र है कि आज भी हिन्द व पाक में उलमा व खुतबा-ए-ख़ानदाने इज्तेहाद "ख़ालिक़ की तौहीद और ख़लाएक़ के इत्तेहाद" के तहत खुदा के दीन की ख़िदमत और अज़ाए सैय्यदुशशोहदा की तबलीग़ में मसरूफ़ हैं और इन्शाअल्लाह कयामत तक मसरूफ़ रहेंगे। आकाए शरीअत के बाद से तालीमाते इस्लामी के अज़ीम मरकज़ हुसैनिय-ए-हज़रत गुफ़रानमआब में काएदे मिल्लते जाफरिया मौलाना सैय्यद कल्बे जवाद नक़वी साहब (इमामे जुमा लखनऊ) अशर-ए-मजालिस और इसी अज़ाख़ाने में ईजाद की हुई मजलिसे शामे ग़रीबाँ को ख़िताब फरमा रहे हैं और ईमान को जगाने वाले व निफाक़ को ख़त्म करने वाले बयानात से मोमिनीने केराम फाएदा उठा रहे हैं। इस साल मौसूफ़ ने उलमा व खुतबा से ख़्वाहिश की है कि वह अपनी तक़रीरों से इत्तेहाद बैनुलमुस्लिमीन को ताक़त पहुँचाएं।

अज़ाए इमाम हुसैन अलैहिस्सलाम इत्तेहाद बैनुलमुस्लिमीन ही नहीं बल्कि इत्तेहादे इन्सानी का सबसे बड़ा और फाएदेमन्द ज़रिया है।

मिसाली दोस्त हबीब (अ०) इब्ने मज़ाहिर

हैदर अली (मुबल्लिग जामिआ इमामिया)

जनाबे हबीब, मज़ाहिर के बेटे थे जैसा कि उन्होंने रज्ज में फरमाया है कि "अना हबीब व अबी मज़ाहिर" और असदी कबीले के मशहूर आदमी थे रिवायतों में उन्हें रसूल (स०) का सहाबी भी माना गया। अमीरुलमोमिनीन हज़रत अली अलैहिस्सलाम और इमामे हसन अलैहिस्सलाम के ख़ास सहाबियों में से थे। और अस्थाबे सैय्यदुशोहदा इमामे हुसैन (अ०) में भी आप नुमायाँ मर्तबे और कूफ़े के शीओं में बुलन्द मक़ाम रखते थे।

मुआविया की मौत के बाद शीआने कूफ़ा की ख़्वाहिश हुई कि इमामे आली मक़ाम कूफ़ा तशरीफ लाएँ तो इस सिलसिले का पहला ख़त सुलेमान बिन सुरदे खुज़ाआ, मुसैय्यिब बिन नुहबह, रिफाआ बिन शदाद और हबीब इब्ने मज़ाहिर दूसरे शीओं के साथ और कूफ़ा के मुसलमानों की तरफ से फ़र्जन्दे रसूल (स०) के नाम भेजा गया था।

जब ऐलची-ए-इब्ने ज़हरा यानी जनाबे मुस्लिम कूफ़ा पहुँचे और मुख़्तार इब्ने अबी उबैदा-ए-सक़फी के घर पर ठहर गए तो वहाँ कूफ़ा के शीआ इकट्ठा हुए जिसमें मुस्लिम बिन अक़ील ने अपने आका हुसैन (अ०) का ख़त पढ़कर सुनाया इसके बाद जनाबे आबिस बिन शबीब शाकरी की तक़रीर हुई जिसमें उन्होंने सिर्फ़ अपनी तरफ से हर तरह की मदद का वादा फरमाया इसके बाद फौरन हबीब इब्ने मज़ाहिर ने अपनी मदद का बड़े अच्छे अन्दाज़ में एलान किया।

क़र्बला में नवीं मोहर्रम की शाम को जब यज़ीद के लश्कर ने इमाम (अ०) पर हमला करने का फैसला कर लिया बल्कि हमले के लिए बढ़ने लगा तो इमाम (अ०) ने अपने भाई अब्बास (अ०) से कहा कि उनसे उनके इरादे के बारे में बात करो तो जनाबे अब्बास (अ०) बीस सवारों के साथ जिनमें जुबैर इब्ने क़ैन और हबीब इब्ने मज़ाहिर भी थे मुख़ालिफीन के करीब गए और उनसे उनका मक़सद मालूम किया तो जवाब मिला कि इब्ने ज़ियाद का हुक्म आया है कि या तुम से बैअत ली जाए या जंग की जाए जनाबे अब्बास ने फरमाया कि मैं इमाम से पूछ कर बताता हूँ। जनाबे अब्बास (अ०) बारगाहे इमाम (अ०) की तरफ चले बाकी लोग अपनी जगह पर रुके रहे मौक़ा ग़नीमत जान कर हुसैन (अ०) का महबूब दोस्त हबीब अपनी दोस्ती के फ़राएज़ के एहसास के तहत मुख़ालिफ़ फौज को समझाना शुरू करता है कि तुम्हारा खुदा के यहाँ बहुत बुरा अन्जाम होगा इस बात पर कि तुमने आले रसूल (स०) और इबादतगुज़ारों का ख़ून बहाया लेकिन उन पर हबीब की नसीहत का कोई असर इसलिए नहीं हुआ कि उनके दिलों पर मुहर लग चुकी थी।

दोस्ती-ए-हुसैन (अ०) की दौलत से मालामाल जज़्ब-ए-नुसरत व कुर्बानी से भरे हुए हबीब को रोज़े आशूर इमामे वक़्त ने अपनी मुख़्तसर रुहानी फौज की टुकड़ी का सरदार मुक़र्रर किया। क़र्बला में जंग शुरू होते ही वह तिश्न-ए-जामे शहादत शख्स थे जो बुरैरे हमदानी के साथ सबसे पहले मुक़ाबले के लिए ललकारने

पर जिहाद के लिए तैयार हुए मगर इमामे वक्त की मर्जी की वजह से बड़ी समझ रखने वाले अपनी जगह पर रुक गए।

हज़रत इमामे हुसैन (अ0) जब अपने ईमानी लश्कर के साथ नमाज़े ज़ोहर पढ़ने के लिए तैयार हुए तो मुख़ालिफ़ फौज़ से नमाज़ की मोहलत माँगी गयी जिस पर हसीन लतीन ने बुलन्द आवाज़ से कहा नमाज़ पढ़ना हो तो पढ़ लो मगर वह कुबूल नहीं, बस इस गुस्ताख़ी को हबीब बर्दाश्त न कर सके और जवाब में फरमाया अरे तुझ जैसे शराब पीने वालों की नमाज़ कुबूल होगी और रसूल (स0) के बेटे जैसे परहेज़गार की नमाज़ कुबूल न होगी इस जवाब पर उस मलउन व शकी अज़ली ने हमला कर दिया हबीब ने उस पर वार किया वह ज़ख्मी हुआ लेकिन बच निकला फिर हबीब ने शौक़े शहादत में रज़ज़ पढ़ना शुरू

किया और फिर उस हुसैन (अ0) के मददगार ने अपनी खून भरी तलवार के जौहर दिखलाए और लड़ते-लड़ते हबीब के लिए एक वह वक्त भी आया कि हुसैन (अ0) की दोस्ती का दम भरने वाला जामे शहादत से सैराब हो गया यानी -

**ज़ीस्त की दौलत ही रख दी उसने पाए यार पर
उम्र भर की बेक़रारी को क़रार आ ही गया**

सोगवाराना शान से इमामे हुसैन (अ0) लाशे हबीब पर पहुँचे और क्यों न पहुँते -

दोस्त की दोस्त ज़माने में ख़बर रखते हैं

मुख़्तसर यह कि हबीब का मर जाना हुसैन (अ0) इब्ने अली (अ0) के लिए मामूली मुसीबत न थी रिवायतों में है कि हुसैन (अ0) जैसे पक्के और मज़बूत इरादे और हौसले के मालिक मुजाहिद के चेहरे पर शिकस्तगी के आसार साफ़ नज़र आ रहे थे। □□□

NAAZ

Plastics

Deals in :-

Digital Print Glow Sign Board
Digital Frontlit Board
Digital Hoarding, Banner
All types of Digital Print,
Vinyl Cutting Plottor
Radium Digital Print

Add.: Maqbara Alia, Golaganj, Lko.
Contact : 9935084074, 9415001374
0522-2610558, 9935037849

Electronics

Deals in :-

Colour T.V.
Washing Machine
Refrigerator
DVD, VCD Player
Gyser, Blower & All types
of Electronic Goods.

Add.: Maqbara Alia, Golaganj, Lko.
Contact : 9935084074, 9415001374
0522-2610558, 9935037849,

Communication (Airtel)

Deals in :-

All types of
Post Paid, Pre Paid
New Model Handset with
Connection Available Here

Add.: Kamla Nehru Marg, Chowk,
Lucknow - 226 003
Contact : 9935084213, 9935084079

“और तक्वे का पहनावा ही अच्छा भला है।”

(सूर-ए-आराफ़)

घर और समाज में खुदा का डर (तक्वा)

(पिछले शुमारे से आगे)

हुज्जतुल इस्लाम हुसैन अन्सारियान
अनुवादक : मु0 र0 आबिद

तक्वे (संयम) की असलियत

तक्वा अरबी शब्द है जो 'वक्फ़' से निकला है। 'वक्फ़' के माने खुद को बचाए रखने और खुदा की हराम की हुई चीज़ों से बचे रहने और परहेज़ करने का है।

तक्वा सच में एक ऐसा हौसला और ताक़त है जो गुनाह छोड़ने और हराम व बुराईयों की लत अपनाने के मज़े से अपने को बराबर रोके रखने की मशक़ से मिलता है। तक्वा अपना लेने और अपने को गुनाहों से बचाये रखने का हौसला पैदा करना बहुत बढ़िया क़दम और बड़ा प्यारा काम है। तक्वा अपनाना एक ऐसी इबादत है जो खुदा के हुक्म से की जाती है। इससे खुदा ज़रूर खुश होगा। बदन की, माल की और आचरण की व नैतिक (Moral) इबादत का फ़लसफ़ा आदमी की ज़िन्दगी में तक्वे को उभारना है। जिस इबादत से तक्वा पैदा न हो वह इबादत नहीं है। तक्वा बड़ाई की बुनियाद, शराफ़त की जड़, सफलता की गारण्टी और आख़िरती भलाई की कुन्जी है।

समाज हज़ारों घरानों से मिलकर बनता है। घराना मियाँ-बीवी और कुछ बच्चों से मिलकर बनता है। असल में घराने और समाज का आधार लोग ही होते हैं। अगर एक-एक आदमी

तक्वे वाला और संयमी बन जाये ता सही घराना और नेक समाज वजूद में आ जाये जिसके अन्दरूनी और बाहरी माहोल में अमन चैन का राज होगा। उसके लोगों की आदमियत पूरी होने के लिए मनचाही ज़मीन बराबर होगी। नतीजे में ऐसा समाज वजूद में आ जायेगा जिसका एक-एक आदमी एक-दूसरे का भला चाहने वाला होगा और सभी एक दूसरे को नुक़सान पहुँचाने से बचे रहेंगे।

तक्वे वालों से खुदा मुहब्बत करता है, नबी व इमाम उन्हें दोस्त रखते हैं और वही लोग भले, शरीफ़ उपयोगी और बड़े होते हैं। तक्वे वाले बड़े अच्छे किरदार के मालिक होते हैं। उनके चेहरे से खुदा का नूर टपकता है, वह बहुत अच्छे चलन, उत्तम आचरण और अच्छाइयों को अपनाते हैं और हर बुराई व गुनाह से अलग-थलग रहते हैं।

आदमी, ख़ानदान और समाज की इज़्ज़त खुदा के तक्वे में ही है। खुदा के नज़दीक तक्वे वालों से ज़्यादा कोई आदमी, घराना या समाज इज़्ज़त वाला नहीं है।

मियाँ बीवी को माँ-बाप औलाद को और समाज के दूसरे लोगों को आपस में जो एक-दूसरे से नुक़सान पहुँचते हैं वे तक्वा न होने की वजह

से पहुँचते हैं। घरों में और लोगों में एक-दूसरे से जो डर, वहशत रहती है वह भी तक्वा न होने के कारण है। लोगों की ज़िन्दगी से जुड़े मुद्दों में जो बेपनाह नुक़सान दिखायी देते हैं वह भी तक्वा न होने की वजह से होते हैं। वाक़ई एक आदर्श (Ideal) घराना बनाने के लिए मियाँ-बीवी पर वाजिब है कि वे खुद तक्वा अपनायें और यह भी ज़रूरी है कि वे तक्वे को अपनी नसलों (Generations) में पहुँचायें और शुरु से ही अपनी औलाद में तक्वा पैदा करने की कोशिश करें।

अच्छा होगा कि आप तक्वे के बेपनाह फ़ायदों को कुआन मजीद की आयतों और रिवायतों में देखें। फिर अन्दाज़ा लगायें और सोचें कि अगर सारे लड़के-लड़कियाँ तक्वे से सज-संवर जायें और फिर इस रूहानी पूँजी से शादी करें तो कितना अच्छा घर और समाज वजूद में आ जायगा।

तक्वा और उसके दर्जे

कुआन मजीद में जो लोग सूझ-बूझ रखते हैं और जिन्होंने रूहानी ऊँचाईयाँ पा ली हैं, वे तक्वे की तीन दर्जे श्रेणियाँ बताते हैं :-

- 1— ख़ासमख़ास तक्वा
- 2— ख़ास तक्वा
- 3— आम तक्वा

हज़रत इमाम जाफ़र सादिक (अ०) इन तीनों दर्जों को एक रिवायत में इस तरह साफ-साफ़ बयान करते हैं :-

“पहला दर्जा ‘बिल्लाह फ़िल्लाह’ तक्वा (खुदा से खुदा के लिए खुदा में डर), यह हलाल

चीज़ों के इस्तेमाल न करने का नाम है, शक़ शुब्हे वाली चीज़ों की तो बात ही नहीं। दूसरा दर्जा ‘मिनल्लाह’ (खुदा से तक्वा) तक्वा है। यह हराम तो क्या शुब्हे वाली चीज़ों से बचने को कहते हैं। यह ख़ास तक्वा है। तीसरा दर्जा जहन्नम के और खुदा के दुखद व पीड़ा देने वाले अज़ाब (के डर) की वजह से पैदा होता है। यह सभी गुनाहों और हराम चीज़ों को छोड़ने का नाम है। इसको आम तक्वा कहते हैं।”

(मवाएज़े अददिया पेज-180)

साफ़ रहे कि इमाम जाफ़र सादिक (अ०) की हदीस में जो हलाल छोड़ने की बात आयी है उसका मतलब यह है कि ऐसा तक्वा रखने वाले बहुत सी हलाल चीज़ों के पीछे भी नहीं दौड़ते हैं क्योंकि वह उनकी ज़रूरत महसूस नहीं करते और उन्हें जिन हलाल चीज़ों की ज़रूरत होती है उनमें भी कम से कम काम लेकर राज़ी खुशी रहते हैं। हर आदमी इस तरह थोड़े पर राज़ी रह सकता है। अगर कोई यह कहे कि मुझमें यह करने की सकत नहीं है तो यह बात मानने के काबिल नहीं है। हलाल में भी थोड़े पर राज़ी-खुशी रहना और ज़िन्दगी की भौतिक (Material) चीज़ों को कम से कम इस्तेमाल में लाना, शान्दार मकान बनाने से बचना तथा महंगी सवारी ख़रीदने, भारी कीमत वाला कपड़ा बनाने और दस्तरख़ान या डाइनिंग टेबल (Dining Table) पर तरह-तरह के खाने चुनना, इन बातों से बचना एक नैतिक (Moral) ज़िम्मेदारी और चहीता काम है, इससे ज़िन्दगी की मामलों में खुदा का तक्वा पैदा होता है।

(जारी)

इदारा

मुख्य समाचार

इराक में शीओं पर हमले इस्लाम दुश्मन ताकतों की साजिश: मौलाना कल्बे जवाद साहब

लखनऊ। तारीखी आसफी मस्जिद में मौलाना सै० कल्बे जवाद साहब ने अक़ीद-ए-आख़िरत और फलसफ-ए-आख़िरत पर रौशनी डाली और मुसलमानों के आलमी मसाएल से अवाम को बाख़बर कराते हुए कहा कि हमारा हकीकी घर जहाँ हमें हमेशा ज़िन्दगी गुज़ारना है उससे मुहब्बत करें। मौलाना ने कहा "जज़ा" इन्साना फितरत में शामिल है। उन्होंने कहा कि हर इंसान जो कोई इक़दाम करता है वह जज़ा का ख़्वाहिशमन्द होता है। यहाँ तक कि जो बन्दगाने खुदा दरपरदा दूसरों की मदद और अयादत व रियाज़त करते हैं वह भी जज़ा के तौर पर सवाब और पाकीज़गि-ए-रूह के चाहने वाले होते हैं।

मौलाना ने कहा कि कमयुनिज़्म की तहरीक की नाकामी का सबब यही था कि फितरत के तकाज़ों के ख़िलाफ़ आइन व क़वानीन तैयार किये गये, जज़ा चूँकि फितरत में शामिल है इसीलिए खुदा ने भी जज़ा और सज़ा को रखा है, क्योंकि अगर जज़ा और सज़ा और इनाम न रखा जाता तो इस दुनिया में ईमानदारी व दयानतदारी और हक़ पसन्दी की ज़िन्दगी कोई नहीं गुज़ारता इसलिए कि अरबाबे दुनिया ने बेईमानों को हमेशा नवाज़ा है और ईमानदारों व दयानतदारों को परेशान किया है।

मौलाना ने आलमे इस्लाम के हालात पर तब्सेरा करते हुए इराक़ में होने वाले दहशतगर्दाना हमलों पर तश्वीश का इज़हार करते हुए कहा कि यह इस्लाम दुश्मन ताकतों की सोची समझी साजिश है। दुश्मन पूरे ख़ित्तए अरब में मुसलमानों में इख़्तेलाफ़ पैदा करके आग लगा देना चाहता है। उन्होंने कहा कि अगर अमरीकी फौज़ मज़ालिम ढा रही है तो अमरीकी फौज़ियों पर हमले होने

चाहिए, बेकसूर शीओं पर हमले क्यों हो रहे हैं, उलमा ख़ामोश बैठे हैं और उनसे कहने पर वह फरमाते हैं कि वहाँ अमरीकी कठपुतली हुकूमत है। मौलाना ने आगे कहा कि मैं यह पूछना चाहता हूँ कि इसी तरह की हुकूमत तो अफ़ग़ानिस्तान में भी है फिर वहाँ की अवाम के साथ यह अमल क्यों नहीं दोहराया जा रहा है। उन्होंने कहा कि अलकाएदा और तालिबान इस्लाम के ख़िलाफ़ साजिश के तौर पर बनवायी गयी हैं, वहाँ के उलमा इस साजिश को समझते हैं वह अवाम को समझाए हुए हैं सब्र की तलकीन कर रहे हैं, क्योंकि अगर शीओं ने जवाब देना शुरू कर दिया तो पूरे अरब में शीआ सुन्नी इख़्तेलाफ़ात और मसलकी इख़्तेलाफ़ात शुरू हो जाएंगे और दुश्मन यही चाहता है। इराक़ में 70 फीसद अवाम शीआ होते हुए भी वह ख़ामोश हैं, वहाँ के शीओं के लिए बहुत सख़्त इम्तेहान की मंज़िल है। वह मर भी रहे हैं और जवाब भी नहीं दे रहे हैं।

मौलाना ने मज़म्मत करते हुए कहा कि हम दुआगो हैं कि मुसलमान दुश्मन की साजिशों को समझे और आपस में मुत्तहिद रहें। मौलाना कल्बे जवाद साहब ने ईरान पर होने वाले हमलों की ख़बरों के सिलसिले में तश्वीश का इज़हार करते हुए कहा कि इस वक़्त आलमे इस्लाम के लिए बहुत सख़्त इम्तेहान की मंज़िल है क्योंकि अगर ईरान पर हमला हुआ तो कोई इस्लामी मुल्क बचेगा नहीं। उन्होंने कहा कि मुसलमान हुक्मरानों से कोई उम्मीद नहीं है वह सब्र ऐश व इशरत में डूब कर गुलामी पर आमादा हैं जो इक़दाम भी करना है वह अवाम को करना है। खुतबे के आख़िर में मौलाना ने आलमे इस्लाम और मुसलमानों के तहफ़फ़ूज़ व सलामती के लिए दुआ करवायी।

क़र्बला-ए-मुअल्ला में हज़रत इमाम हुसैन (अ०) के हरमे मुतहहर की तज़ैय्युनकारी

क़र्बला-ए-मुअल्ला। हरमे मुक़द्दसे हज़रत इमाम हुसैन (अ०) के गुम्बदों की तलाई तज़ैय्युनकारी का काम मुहर्म्म से क़ब्ल मुकम्मल होने की ख़बर है। हरमे मुतहहरे सैय्यदुशशोहदा के मिनारों और गुम्बदों पर सोने के टाएल्स फिट किये जा रहे हैं।

इस प्रोजेक्ट की निगरानी सुप्रिम कमेटी की इज़ाज़त से शुरू की गयी है। इस पूरे काम की ज़िम्मेदारी एक हिन्दुस्तानी फर्म, अलफ़ैज़ुल हुसैनी एसोसिएशन को सौंपी गयी है। यह काम पूरी तरह से 12 महीनों में मुकम्मल होगा।

याद रहे कि दो साल क़ब्ल अमरीका और उसके इत्तेहादियों की बमबारी से इराक़ के कई मुक़द्दस मक़ामात को नुक़सान पहुँचा था और नई हुकूमत ने इस सिलसिले में कारवायी करते हुए उन मज़हबी मक़ामात की मरम्मत का बड़े पैमाने पर काम शुरू कराया है। मक़ामी शहरियों में इस तज़ैय्युनकारी से इन्तिहाई खुशी है और कुछ खुददाम तो इस काम में पेश-पेश हैं, और उन मज़दूरों और कारीगरों का साथ दे रहे हैं जो काम में लगे हुए हैं।

हज्जे बैतुल्लाह के मुबारक मौके पर

आयतुल्लाह सै० अली खामेना-ई मददजिल्लहू का खिताब

ईरान। हज के मुबारक व मसउद मौके पर ईरान के रहबरे मुअज़्जम हज़रत आयतुल्लाह सै० अली खामेना-ई ने मुसलमानों को खिताब करते हुए मक्क-ए-मुअज़्जमा में हाजियों के इत्तेमाअ को इन्सानी हमदर्दी के समन्दर से ताबीर किया। आपने फरमाया कि इन्सानों का जम्मेगुफ़ीर अल्लाह तआला की वहदानियत और तौहीद का सुबूत है। यहाँ पहुँच कर बन्दा खुदाए बरतर के नज़दीक होता है और इत्तेजा, आजिज़ी व इन्केसारी से दुआए ख़ैर माँगता है। खिताब के शुरु में आपने ईरान में हुए हालिया हवाई जहाज़ के अफसोसनाक हादसे पर रंज व गुम का इज़हार किया। हादसे में जाँबहक होने वाले जमहूरी इस्लामी ईरान के फरज़न्दान के लिए दुआए मग़फ़िरत की और उनके ख़ानदान व लवाहेकीन को सब्र की तलकीन की।

आप ने हज़रत इमाम खुमैनी के मिल्ली इत्तेहाद के नारे की अहमियत पर जोर देते हुए फरमाया कि इमाम खुमैनी ने पैग़म्बरों के हादियों, मुस्लेह और नेक बन्दों के

तौहीद के पैग़ाम और मसलकी हदबन्दी के ख़ात्मे पर ज़ोर दिया। हज बैतुल्लाह का खुसूसी पैग़ाम यही है कि हज़रत इब्राहीम (अ०) और उनके बाद पैग़म्बरों के बताए हुए तरीके से हज करें और हज के पैग़ाम पर अमल करें।

आपने इस बात पर ज़ोर दिया कि हाजी ख़ान-ए-काबा, मक्का और मदीना के पाक मुक़द्दस मक़ामात की अज़मत को पहचानें और पूरी रूहानियत के साथ हज के फ़राएज़ को अन्जाम दें। हज़रत आयतुल्लाह सै० अली खामेना-ई ने इस्लाम मिल्लत के मौजूदा हालत ज़ार का तज़क़िरा करते हुए इराक़ और फिलस्तीन पर अमरीका के ग़ासिबाना कब्ज़े की मज़म्मत करते हुए फरमाया कि अमरीका इराक़ में अमरीकी गर्वनर मुक़र्रर करके इराक़ पर हुकूमत करना चाहता है। उन्होंने इराकी अवाम पर ज़ोर दिया कि वह मसलकी इख़्तोलाफ़ात भुला कर आइन्दा इन्तेखाबात में ऐसे शख्स का इन्तेखाब करें जो ईमानदार, मुख़लिस और इराकी अवाम का वफ़ादार हो।

मौलाना कल्बे जवाद साहब हुसैनाबाद ट्रस्ट के नये सदर

ट्रस्ट का चार्ज, कमेटी को न सौंपने पर अवाम में नाराज़गी

लखनऊ। मौलाना कल्बे जवाद साहब ने ज़िला मजिस्ट्रेट की जानिब से हुसैनाबाद ट्रस्ट का चार्ज मुताल्लिका कमेटी को न सौंपे जाने पर नाराज़गी का इज़हार करते हुए इसे शीआ कौम के साथ ज़ियादती करार दिया है। उन्होंने इस मसले को कौम के लोगों के बीच ले जाने का एलान करते हुए कहा कि जुमा को नमाज़ के दौरान वह लोगों से इस सिलसिले में बात करेंगे। उन्होंने कहा कि जो भी राय कौम की तरफ से आएगी उसके मुताबिक़ हुसैनाबाद ट्रस्ट की ज़िम्मेदारी कौम को देने के सिलसिले में कारवायी की जाएगी।

मौलाना ने कहा कि गुज़श्ता चन्द बरसों से हुसैनाबाद ट्रस्ट की निगरानी का काम ज़िला मजिस्ट्रेट बतौर चेयरमैन सिर्फ़ इसलिए कर रहे थे कि ट्रस्ट का इन्तिज़ाम चलाने के लिए किसी कमेटी की तश्कील नहीं हो पा रही थी, मौजूदा शीआ वक्फ़ बोर्ड से पहले जो बोर्ड था उसकी जानिब से भी इस सिलसिले में कोशिश की गयी

थी लेकिन कुछ ख़ामियों की वजह से राएल फैमिली के एक मिम्बर की जानिब से इस कारवायी को अदालत से स्टे लेकर रुकवा दिया गया था, क्योंकि यह स्टे ख़त्म हो गया है और वक्फ़ बोर्ड ने नयी कमेटी की तश्कील कर दी है ज़िला मजिस्ट्रेट को हुसैनाबाद ट्रस्ट का चार्ज इस कमेटी को दे देना चाहिए। वाजेह रहे कि शीआ वक्फ़ बोर्ड की तरफ से बनी नयी कमेटी का चेयरमैन मौलाना कल्बे जवाद साहब को बनाया गया है। उन्होंने आगे कहा कि बोर्ड की इस कारवायी के बाद उन्होंने डी०एम० को एक ख़त भेज कर अपील की थी कि छोटे इमामबाड़े के ट्रस्टी रूम में आकर उन्हें ट्रस्ट का चार्ज दे दें। इसके लिए 23 जनवरी शाम चार बजे का वक़््त तैय हुआ था लेकिन न तो ज़िला मजिस्ट्रेट आए और न ही उनकी तरफ से कोई पैग़ाम आया जिससे शीआ कौम में बेहद नाराज़गी है। उन्होंने कहा कि चार्ज लेने के लिए बोर्ड की तरफ से कानूनी कारवायी भी की जाएगी।

इंसान को बेदार तो हो लेने दो
हर कौम पुकारेगी हमारे हैं हुसैन



हर प्रकार की होम्योपैथिक
दवाओं के लिए तशरीफ लाएँ
Nayyar Homeo Hall
नय्यर होम्यो हाल

होम्योपैथिक दवाख़ाना
पीपल चौराहा, निकट कांग्रेस भवन, बहराईच
फोन : 05252-235633